प्रकाशक

डॉ० ज्ञानप्रकाश जैन

५/६००, शुचि प्रकाशन,
कोटगेट, बीकानेर (राज०)

दूरभाष ३६५२ व ३४०४

प्रथम सस्करण, १६७८
मूल्य . पन्द्रह रुपये मात्र ।

मुद्रक—

शुचि प्रिंटर्स

रानी बाजार, बीकानेर (राज०)

घरेलू चिकित्सा

(घरेलू नुसखों का संग्रह)

विषयानुक्रमणिका

पृष्ठ सख्या

१. बीमारी किसे कहते है — १
—बीमारियो के प्रकार

२ चिकित्सा का प्रयोजन और उसके अग — ६

३ दवा बनाने और उनके इस्तेमाल करने के सम्बन्ध में खासतौर से जानने योग्य बाते — ९

४ बुखार — १३
–प्रचलित विशिष्ट सक्रामक बुखार –आन्त्रिक ज्वर (टाइफाईड), श्वसनक ज्वर, (न्यूमोनिया), श्लेष्मक ज्वर (इन्फ्लुएजा), ग्रंथिक ज्वर (प्लेग), कनफेड (मम्प्स), कमर तोड बुखार (डेग्यूत्र) आमवातिक ज्वर (रियुमेटिक फीवर), रोहिणी (डिपथेरिया) गर्दन तोड बुखार (मेनिजाइटिस), खसरा, शीतला (स्माल पौक्स), छोटी माता, विषम ज्वर, काला अजार —

५ पेट की बीमारिया — ४४
अग्निमाद्य और अजीर्ण, अरुचि, कै होना, दस्ते लगना, पेचिश ग्रहणी और सग्रणी, हैजा, शूल, अम्लपित्त, बायगोला, बवासीर, क्रिमिरोग, उदावर्त, आनाह, आध्मान, जलोदर —

६ छाती की बीमारियाँ — ६६
तपेदिक, खासी, काली खासी, दमा, हिचकी, हृदगरोग

७ सारे शरीर की विमारिया — ७४
रक्तपित्त, पाण्डुरोग, पीलिया, प्लीहा (तिल्ली) वढना, यकृत (जिगर) वढना, मोटापन, वातरोग, गठिया, सूजन, कुष्ठ रोग, सफेदकोढ, पित्ती उछलना ।
८ पेशाव की वीमारिया — ९०
पेशाव रुकना, पथरी, प्रमेह, वीर्यरोग ।
९. फोडा और घाव — ९५
१० मानसिक वीमारिया — ९७
पागलपन, मृगी, हिस्टेरिया ।
११. वच्चो मे होने वाली वीमारियाँ — १०२
१२. स्त्रियो मे होने वाली वीमारियाँ — १०४
१३. मुंह, नाक, सिर, आंख और कान की वीमारियाँ — १०७
१४ आकस्मिक दुर्घटनाएं और उनका प्राथमिक उपचार — ११३

प्रस्तावना
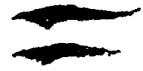
मनुष्य के जीवन मे यह आवश्यक नही होता कि वह अपनी हर बीमारी के लिए चिकित्सा कराने वैद्य या चिकित्सक के पास जाये। अपने विवेक से घर मे ही वह अनेक छोटी-बडी बीमारियो की उचित चिकित्सा कर सकता है। भारतीय समाज के हर घर और परिवार में चिकित्सा सम्बधी न्यूनाधिक ज्ञान पारम्परिक रुप से प्रचलित है। इसके लिए विशेष शिक्षा दीक्षा की भी आवश्यकता नही रहती। घर के वडे बूढे स्त्री पुरूष अपने अनुभवो के आधार पर बाद की पीढी के लोगो को यह ज्ञान देते रहते है। नवीन शिक्षा, पाश्चात्य ज्ञान विज्ञान की चकाचौध और आर्थिक व सामाजिक उलझनो मे व्यस्त आज का भारतवासी इस पारम्परिक ज्ञान से विमुख होता जा रहा है। साधारण सी बीमारियो की चिकित्सा के लिए उसे किसी चिकित्सक की शरण लेनी पड़ती है। इससे धन और समय की पर्याप्त हानि होती है। अत एक ऐसे योग सग्रह की आवश्यकता अनुभव हो रही थी जो ऐसे बीमार और जरूरतमद लोगो को अपने ही आप रोगो की पहिचान कर आसानी से उपलब्ध हो सकने वाली दवा जुटाने मे मदद कर सके। यद्यपि इस ओर पूर्व मे भी कई पुस्तके लिखी जा चुकी है। परतु

इस पुस्तक की नवीनता और उपयोगिता का सही मूल्यांकन तो पाठक ही कर सकेंगे।

प्राय: प्रचलित सभी रोगों के लिए हमारे आसपास सरलता से और सस्ते मे मिलने वाली औषधिया ही इसमें बतायी गयी है सभी प्रयोग सरल और अनुभव सिद्ध है। औषधि की मात्रा लेने के तरीके और समय का भी यथास्थान निर्देश कर दिया गया है।

इस ग्रंथ के प्रणयन की प्रेरणा राज० आयुर्वेद महाविद्यालय, उदयपुर के प्राचार्य आदरणीय श्रीमान वासुदेव जी शास्त्री से प्राप्त हुई थी अत लेखक उनका हृदय से कृतज्ञ है।

पिछले तीन वर्षो से डा० श्री ज्ञानप्रकाश जी जैन इस प्रकार की पुस्तक लिखने का आग्रह करते रहे थे उन्ही के सत्प्रयत्नो से यह प्रकाशित भी हो रही है। अत उनका आभार व्यक्त करना मैं अपना पुनीत कर्तव्य समझता हूँ।

पत्नी वैद्या श्रीमती सावित्रीदेवी ने इसकी पाण्डुलिपि तैयार करने मे सहयोग दिया है लेखक उनका साधुवाद करता है।

अन्त में जिज्ञासु पाठको के सुझावो की कामना करते हुए

विद्वत्कृपाकांक्षी

राजेन्द्र प्रकाश भटनागर

अध्याय-१

बीमारी किसे कहते हैं?

आयुर्वेद शास्त्र का प्रयोजन स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य (आरोग्य) को बनाये रखने के उपाय बताना और यदि व्यक्ति रोगी हो गया हो तो चिकित्सा कर उसे रोग से छुटकारा दिलाना है। इस प्रकार आयुर्वेद का लक्ष्य दीर्घ जीवन और आरोग्य प्रदान करना है।

यह जीवित शरीर तीन चीजो से मिलकर बना है—जड शरीर (जो पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश—इन पच भूतो से निर्मित है), मन और आत्मा से बना है। इन तीनो को जीवन के तीन 'पाये' (त्रिदण्ड) कहते है अत जीवित शरीर तिपाये पर टिका हुआ है। इनमे से आत्मा ही परमात्मा का अश है और उसमे किसी प्रकार की खराबी नही होती, वह विकार-रहित रहता है। शेष दो—शरीर और मन—ही रोगो के 'अधिष्ठान' (आश्रय आधार) है। शरीर मे होने वाले रोग 'शारीरिक रोग' और मन में होने वाले रोग 'मानसिक रोग', कहलाते है।

जिस किसी कारण और परिवर्तन से शरीर और मन में दुख होता है, उसे 'रोग' या '**बीमारी**' कहते है।

आयुर्वेद शास्त्र मे यह सैद्धान्तिक रूप से स्वीकार कर लिया गया है कि मनुष्य के शरीर मे वात, पित्त और कफ नामक तीन दोष निश्चित परिमाण मे होते है। जब तक इनका यह निश्चित परिमाण बना रहता है, तब तक मनुष्य निरोगी या स्वस्थ रहता है। इन वात को दोषो की 'समावस्था' कहते है। परन्तु, जब बाहरी और भीतरी कारणो से इनका निश्चित परिमाण बिगड जाता है, अर्थात् जब दोष

बढ जाते है अथवा घट जाते है तो रोग या बीमारी हो जाती है। दोषों के घटने से उनके कार्य और गुण कम हो जाते हैं, अत ज्यादा तकलीफ मालूम नही होती, परन्तु जब दोष बढ जाते है तो शरीर और मन मे अनेक बुरे लक्षण पैदा होते है, इस दशा को दोषो का 'कोप' कहते है और वास्तव मे अधिकाश रोग दोषो के कोप के कारण ही होते है।

बीमारियों के प्रकार

वैसे बीमारिया असख्य है और उनकी सही गिनती करना सभव नही है। प्राचीन वैद्यक—शास्त्रकारो ने इनको मोटे तौर पर चार भागो मे बाटा है—

(१) **स्वाभाविक रोग**.—समय(काल)स्वाभाविक गति से चलता रहता है। समय की गति के कारण जो बीमारिया अपने आप पैदा होती है, उन्हे 'स्वाभाविक रोग' कहते हैं, जैसे भूख, प्यास, बुढापा, मृत्यु आदि।

(२) **आगन्तुज या आकस्मिक रोग**
चोट लगने, पेड से गिरने, जल जाने, जन्तुओ द्वारा काट लेने आदि से होने वाली बिमारिया 'आगन्तुज' या आकस्मिक कहलाती है।

(३) **मानसिक रोग** – किसी के प्रति लगाव रखना 'इच्छा' कहलाती है और किसी को नही चाहना 'द्वेष' कहलाता है। चाही गई चीज नही मिलने और अनचाही चीज मिल जाने से मन मे काम, क्रोध, लोभ, मोह, मात्सर्य, उन्माद, अपस्मार आदि रोग हो जाते है। इनको 'मानसिक रोग' कहते है।

(४) **शारीरिक रोग** —वात, पित्त और कफ नामक दोषो की गडबडी से होने वाले रोग शारीरिक रोग कहलाते है जैसे ज्वर (बुखार), अतिसार (दस्ते लगना), राजयक्ष्मा, पाण्डुरोग आदि।

१ ये सब बिमारिया अक्सर तीन प्रकार की होती है– इनमे से कुछ खानपान की अनियमितता के कारण होती है ये,'**दोषज**' बीमारिया कहलाती है। दोषजो के ठीक हो जाने पर ठीक हो जाती है जैसे अजीर्ण आदि।

२, कुछ बीमारिया पहले के (इस जन्म मे वर्तमान काल से

पहले किये हुए अथवा इस जन्म से पहले के जन्म मे किये हुए) कर्मो के फल के परिणाम–स्वरूप पैदा होती है। इनको '**कर्मज**' बीमारिया कहते हैं। कर्म का फल भोग लेने पर कर्मक्षीण हो जाता है, तब ये बीमारिया भी शान्त हो जाती है। कर्म का प्रायश्चित्त करने से भी इनसे छुटकारा मिलता है। जैसे – कोढ, प्रमेह आदि।

कुछ बिमारिया कर्म के फल और दोषो की गडवडी इन दोनो के समिश्रण से पैदा होती है। इनमे दोनो प्रकार की चिकित्सा वरती जाती है जैसे – कोढ, सफेद कोढ, आदि बीमारिया।

इन भेदो के अलावा कुछ ऐसी भी बिमारिया हैं जो मनुष्य योनि से भिन्न योनि वाले शरीर रहित जीवो, जिनको बोलचाल मे 'भूत-प्रेत' या 'ग्रह' कहते है के शरीर और उसमे रहने वाले मन मे प्रवेश करने से पैदा होती है। इनको 'भूत बाधा' (भूतजनित रोग) कहते है। इनसे शारीरिक विकारो के साथ अधिकतर मानसिक विकार पैदा होते है।

एक और रोगो का वर्ग शेष रह जाता है, जिनको 'औपसर्गिक' या सक्रामक रोग कहते है। आधुनिक चिकित्सा विज्ञान 'एलोपेथी' मे इन रोगो का बहुत विस्तार के साथ वर्णन किया गया है अक्सर यह कहते सुना जाता है कि-आयुर्वेद शास्त्र मे औपसर्गिक रोगो को नही माना गया है और उनका विवेचन नही किया गया है। परन्तु यह कहना सर्वथा भूल है नीचे हम एक सन्दर्भ प्रस्तुत कर रहे है जिसमें यह बताया गया है कि किस-किस प्रकार से औपसर्गिक (सक्रामक) रोग एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में फैलते है तथा कौन-कौन से प्रसिद्ध औपसर्गिक रोग है।

प्रसगाद्गात्रसस्पर्शान्निश्वासात्सहभोजनात्।
सहशय्यासनाच्चापि वस्त्रमाल्यानुलेपनात्।
कुष्ठ ज्वरश्च शोषाश्च नेत्राभिष्यन्द एवच।
औपसर्गिकरोगाश्च सक्रामन्ति नरान्तरम्॥

(सुश्रुतसहिता, सूत्रस्थान–अध्याय-५, श्लोक ३३)

(१) औपसर्गिक रोग से पीडित स्त्री और पुरुष के परस्पर मैथुन करने से (इससे कुष्ठ, उपदश और वेनेरल डिजिजेज फैलती है।)

(२) शरीर के छूने से (इसमे कुष्ठ, शीतला आदि रोग फैलते है।)

(३) श्वास के साथ निकली वायु के कारण (राजयक्ष्मा, डिफ्टेरिया, कुकुरखासी आदि रोग ऐसे ही फैलते है, रोगी के नाक और मुंह से खासते, छीकते, बोलते और खरासते, समय निकते हुए थूक, और कफ की बूंदो से दूसरे लोगों मे संक्रमण या उपसर्ग पहुचता है।,

(४) साथ बैठकर भोजन करने से (इससे मोतीझरा, दस्तें लगना, हैजा आदि रोग, पानी और अन्न के दूषित होने मे) ही फैलते है।

(५) साथ मे सोने से (कोढ, शीतलता आदि रोग ऐसे ही) फैलते है।

(६) रोगी के कपडे, माला और रोगी को लगाये हुए चंदन आदि लेप को दूसरे व्यक्ति द्वारा काम मे लेने पर (कुष्ठ, चेचक आदि रोग फैलते है।)

इस सदर्भ मे कुछ औपसर्गिक रोगो की गणना भी की गई है—जैसे कुष्ठ (चमडी के रोग, रक्त की खराबी से होने वाले रोग और गलित कोढ-लेप्रोसी), ज्वर (अनेक प्रकार के बुखार छुत से ही फैलते है), शोष [राजयक्ष्मा या तपेदिक की बीमारो], नेत्राभिष्येद [आखे आना, आँख की बीमारियां] ये औपसर्गिक बीमारियां जीवाणुओ से फैलती है। उनका भी आयुर्वेद मे वर्णन है।

इस प्रकार सभो प्रकार की औपसर्गिक बीमारियो का सक्षेप मे निर्देश किया जा चुका है। फिर भी, आयुर्वेद शास्त्र मे इनका विस्तार से क्यो नही विचार किया गया ? सभी रोगो—यहा तक कि ज्वर गिनाये गये, कोढ, बुखार, शोष, अभिष्यद आदि का विचार भी, आयुर्वेद में वातपित और कफ के सिद्धात पर भी किया गया है। इसका एक मूलभूत कारण है। वह यह कि आयुर्वेद शास्त्र मे शरोर के बल को बनाये रखने पर जोर दिया गया है। इसके लिए उपाय भी बताये गये है। जब तक शरीर का बल बना रहेगा, तो दोषो मे भी बिगाड नही होगा और जीवाणु शरीर में पहुचने पर भी रोग नही पैदा कर सकते। हम जिस वातावरण में रहते है और जिस अन्नपान का सेवन करते हैं, वह जीवाणुओ से रहित नही है, फिर भी हममें से सभी लोग

बीमार नही होते, कुछ ही सक्रामक रोग से पीडित होते है और शेष स्वस्थ रहते हैं। इससे एक बात समझ मे आती है कि जीवाणु भी अपने लिए अनुकूल शरीर मे ही रोग पैदा करते है। शरीर सबल हो तो जीवाणुओ का प्रभाव नही होता। शरीर का बल वात-पित्त-कफ इन तीनो दोषो की समावस्था के कारण होता है। अतः दोषो को समान परिमाण [अपने निश्चित परिमाण] मे बनाये रखने के लिए आयुर्वेद मे उपाय बताये गये है।

इसके अलावा, जीवाणुओ से होने वाले रोगो मे वात-पित्त-कफ के विगडने से ही लक्षण पैदा होते है और चिकित्सा से ये दोष ठीक होकर लक्षण शान्त होते है। यह बात ध्यान देने योग्य है कि ये दोष किसी यन्त्र आदि की सहायता से दिखाये नही जा सकते। इनमे बिगाड होने पर कुछ खास लक्षण पैदा होते है। आयुर्वेद में भी इनकी पहचान अच्छे और खराब लक्षणो के द्वारा ही बतायी गयी है। ये लक्षण इन दोषो के गुण और कर्म है। इन लक्षणो को देखकर ही दोष की समता, वृद्धि [बढना] और ह्रास [घटना] का निश्चय किया जाता है। चिकित्सा का परिणाम भी इन्ही लक्षणो को जाचकर किया जाता है। इस प्रकार-आयुर्वेदिक चिकित्सा लक्षणो पर निर्भर रहने वाली चिकित्सा होने पर भी केवल लाक्षणिक चिकित्सा [सिम्प्टोमेटिक ट्रीटमेन्ट] से इसमे मिलता है। आयुर्वेद मे, लक्षणो को देखकर किसी दोष के घटने या बढने का, लक्षणो के न्यूनाधिक घटने या बढने का तथा उसका कारण देखा जाता है, अर्थात् किस कारण से और कितने परिणाम मे कोई लक्षण पैदा होता है। इससे चिकित्सा का लक्ष्य मूलगामी [रेडिकल] होकर भी उन्मूलक [क्यूरेटिव] बन जाता है।

●

अध्याय-२

चिकित्सा का प्रयोजन और उसके अंग

शरीर की रचना (स्ट्रक्चर फार्मेशन) जिन पदार्थो से होती है उन्हे 'धातु' (शरीर का और पोपण करने वाले पदार्थ) और 'मल' (शरीर के उपयोग मे आने पर बचे हुए और शरीर से बाहर निकाल दिये जाने वाले पदार्थ) से होता है। धातुओ और मलो का पोपण, क्रिया और गति, जिन पदार्थो से होती है,उनको 'दोप कहते हैं'। इनको 'दोष' अर्थात् 'खराव' इसलिए कहा जाता है कि ये ही पदार्थ स्वय पहले विगड कर फिर अपने द्वारा पोषित और क्रियाशील धातुओ और मलो को खराव करके रोग उत्पन्न करते है और इनके सम प्रमाण मे होने पर धातुओ और मलो का पोषण और कार्य भी ठीक बन जाता है इसीलिए शरीर के मूल (आधारभूत कारण) तीन प्रकार के पदार्थ कहे गये है — दोष, धातुऔर मल।

" दोषधातुमलमूला हि शरीरम् "

१ दोप ३ तीन हैं-वात, पित्त, कफ।

२ धातु ७ सात है-रस, रक्त मांस, भेद [चरवी], अस्थि [हड्डी], मज्जा [हड्डी मे रहने वाली चरवी], और शुक्र [स्त्रियो मे आर्तव]। [पुरुष के शुक्र और स्त्री के आर्तव के मिलने से ही गर्भधारण होकर सतान पैदा होती है।]

३ ,मल' मुख्य रुप से ३ है-टट्टी पेशाव और पसीना (प्रत्येक धातु और उसकी उप-धातु का भी अलग-अलग मल 'वेस्ट मेटर' होता है।

इन दोषो को खराव करने वाले और उनके जरिये धातुओ और मलो को खराव करने वाले कारण सक्षेप मे तीन ही है।

१ काल अर्थात ऋतुओ का मौसम की गडवडी [कम होना

गलत होना, और अधिक होना]

२ अर्थ [शरीर को बनाने वाले पचमहा भूत] का कम, गलत या अधिक होना] ।

३ कर्म [शरीर मन और वाणी की प्रवृत्ति को 'कर्म' कहते है] का कम गलत या अधिक होना इन कारणो से दोपों मे विगाड हो जाना है ।

जैसा की हम ऊपर वता चुके है, दोपो का घटना या वढना [खासकर वढना या कोप] रोग को पैदा करता है। अतः चिकित्सा का मूल उद्येश्य ही (१) वढे हुए दोपो को निकाल कर अथवा घटाकर समप्रभाव मे लाना (२) घटे हुए दोपो को वढाकर समप्रभाव मे लाना (३) समप्रभाव मे रहने वाले दोपों को समप्रमाण मे वनाये रखना है ।

वातपित्त कफ दोप जव दिखाई नही देते तो इनका निश्चित परिमाण कैसे जाने ? यह प्रश्न जटिल होने पर भी इसका समाधान वहुत सरलता से किया जा सकता है। दोप घटने पर अपने गुण और कर्मो को त्याग देते है] अर्थात् उनके गुणकर्म हो जाते है] वढने पर अपने गुणो और कर्मो को अधिक प्रमाण मे करने लगते है इन से ही [वढे हुए दोपो से] अकसर रोग पैदा होते है। जव समप्रभाव मे रहते है तो अपने गुण और कर्म प्राकृत रुप मे करते रहते है। इन प्राकृत गुण कर्मो के अर्थात दोपो के प्राकृत लक्षणो को देखकर ही उनके परिमाण में रहने का निश्चय किया जाता है। प्रत्येक व्यक्ति मे अपनी प्रकृति, आयु, लिंग देह काल आदि के अनुसार दोपो का निश्चित या समप्रभाव भिन्न-भिन्न होता है अर्थात एक व्यक्ति में वात जितने प्रमाण में रहकर सम निश्चित या अनुकुल या प्राकृत दशा मे रहता है वह दूसरे व्यक्ति मे कम या अधिक हो सकता है। अत उस दूसरे व्यक्ति के लिए वात का भिन्न ही प्राकृत प्रभाव होता हैं यही नही एक ही व्यक्ति में दोप का निश्चित समप्रमाण लिंग, वय दिन-रात-ऋतु भोजन व उसके काल अवस्था और देश के अनुसार वदलता रहता है, परन्तु उससे कोई बुरे लक्षण पैदा नही होते अत वह प्रमाण वदलते रहने पर भी प्राकृत या सम ही माना जाता है ।

इस प्रकार दोपो का प्रकोप ही रोग का मूल है। इस वात को ध्यान मे रखते हुए चिकित्सा मे चार वातो का उपयोग होता है ।

१. संशोधन — बहुत अधिक बढे हुए दोषों को वमन (उल्टी कफ में) विरेचन (कोष्ट शुद्धि द्वारा पित्त में और बस्ति (एनिमा द्वारा वात मे) से निकाल दिया जाता है।

२. संशमन — जो दोष अधिक बढे हुए नही है उनको दवा देकर शरीर के भीतर ही ठीक किया जाता है।

३. परहेज़ वाला अन्नपान —दिया जाता है। (आहार)

४. आचार (विहार).— परहेज की बातों का पालन करते हुए रखा जाता है।

किन कारणो से दोष बढते या कुपित होते है और उनके बढने से शरीर मे कौन कौन से गुण कर्म या लक्षण पैदा होते है जिनके द्वारा उनको पहचाना जाता है, इसका वर्णन आयुर्वेद शास्त्र मे विस्तार से मिलता है।

●

दवा बनाने और उनके इस्तेमाल करने के सम्बन्ध में खासतौर से जानने योग्य बातें

(१) इस पुस्तक में हमने सामान्यतया वैद्यो में प्रचलित नुसखो का सग्रह किया है। कुछ ऐसे नुस्खे हैं जो राजस्थान की सम्मान्य वैद्य परम्परा और, राजकीय वैद्यो और हमारी व्यक्तिगत वैद्य-परम्परा मे काम मे लिये जाते रहे है, उनका भी इसमे उल्लेख किया गया है। ये नुस्खे अधिक उपयोगी और लाभकारी है।

(२) इसमें उन्ही दवाओ को लिखा गया है जो सामान्य व्यक्ति अपने घर पर ही आसानी से वना सकता है। अत. खासकर जडी-बूटी का स्वरस (रस), कल्क (लुगदी), क्वाथ (काढा), चूर्ण और गोली के रूप मे नुस्खे लिये गये है।

(३) **रस-या-स्वरस**:—यह दो प्रकार से बनाया जाता है। ताजी और गीली औषधि को लेकर साफ पानी से धो लें और उसे कूट-पीसकर, कपडे मे रखकर अथवा दोनो अंगुलियो या हथेलियों मे दवाकर-निचोडकर रस निकाले। आजकल नीबू, मूली आदि का रस निकालने के लिए प्रेशर मशीने भी बाजार मे मिलती है, इनका भी रस निकालने के लिए आवश्यकतानुसार इस्तेमाल किया जा सकता है। जिन द्रव्यो मे रस खूब होता है, उनका रस निकालने के लिए यह विधि बरतनी चाहिए।

परन्तु जिन द्रव्यो मे रस अधिक नही होता उनसे उपर्युक्त विधि से रस नही निकाला जा सकता। जैसे—नीम, अडूसा, बेल की पत्तिया आदि। इनसे रस निकालने के लिए 'पुटपाकविधि' बरती जाती है। इसकी यह विधि है कि—द्रव्य को साफकर उसे कूटकर या सिल पर बाटकर लुगदी बना लेते है। इस लुगदी को चारो ओर से

श्राम या बरगद के पत्तो से लपेटकर मूत से बाध दें, फिर उन पत्तों पर अच्छी-गीली मिट्टी का एक अगुल मोटा लेप कर दे। उसे जरा सा सुखाले और आग के बीच में रख दे। जब आग में ऊपर की मिट्टी लाल हो जाय तो उसे निकाल कर पूरा ठडा करने से पहले ही मिट्टी को धीरे-धीरे हटाकर लुगदी को निकाल, कपडे मे लपेट, निचोडकर रस निकाल लेवे।

(iii) **कल्क या लुगदी**—ताजी हरी दवा को अथवा सूखी दवा को पानी मे कुछ समय तक भिगोकर अच्छी तरह भीग-गल जाने पर निकालकर कूट पीसकर चटनी जैसा बना लें। इसे 'कल्क' या 'लुगदी' कहते है।

(iv) **क्वाथ-काढ़ा**—सूखे हुए द्रव्यो को जौ-कूट कर (मोटा दरदरा कूटकर), यदि द्रव्य मृदु (जैसे फूल, पत्ती आदि) हो तो उसमें चारगुना पानी मिलावे, यदि द्रव्य मध्यम (जैसे छाल, पचाग आदि) हो तो उसमे आठ गुना पानी मिलावे और यदि द्रव्य कठिन (जैसे लकडी आदि) हो तो सोलह गुना पानी मिलावे और मदी आच पर मिट्टी के पात्र या कलई वाले धातु के पात्र मे ढक्कन वदकर पकावे। मृदु और मध्यम द्रव्यो को क्रमश चौगुना और आठ गुना जल में पकाकर चौथाई शेष रखना चाहिए तथा कठिन द्रव्यो को सोलह गुने पानी में पकाकर आठवा हिस्सा शेष रखना चाहिए। काढे को आंच से उतारकर, छानकर, फिर उसमे, शहद, मिश्री, हिंग आदि (यदि मिलाने के लिए लिखा हो तो) मिलाकर गुनगुना (कफ व वायु के रोगो में) अथवा ठण्डा करके (पित्त के रोगो मे) पिलावे।

(v) **क्षीरपाक**—अर्थात् दूध मे पकाकर दवा लेना हो तो दवा का मोटा चूर्णकर १५ गुने दूध और उतने ही पानी को मिलाकर पकावे। दूध मात्र शेष रहने पर उतार कर छान ले।

(vi) **चूर्ण**—सूखी दवा को कूट-पीटकर महीन कर कपड छान कर ले। इसे 'चूर्ण' कहते है।

(vii) **गोली**—गुड, शक्कर, गुगल, जल, गोद का लुआब आदि में दवा के चूर्ण को मिलाकर घोटकर, गोली बनाते है। इसके लिए चूर्ण से शक्कर चौगुनी, गुड दुगुना और गुगल या शहद चूर्ण के बराबर लेना चाहिए।

आयुर्वेद-शास्त्र में दवा बना बनाने की अन्य कल्पनाएं—जैसे अवलेह, आसव, अरिष्ट, घृत, तेल, रस भस्मे आदि प्रचलित है परन्तु उनको सामान्य व्यक्ति नही बना सकता। अनुभवी और कुशल वैद्य ही उनका निर्माण करना जानते है। अत उनका यहा प्रयोग नही किया गया है।

(४) इस पुस्तक मे जिन नुस्खो के द्रव्यो को कितना लेने का उल्लेख जहाँ नही किया गया है, वह वहा उन सब द्रव्यो को बराबर-बराबर लेना चाहिये।

(५) फिटकरी और सुहागे की शुद्धि, उनकी खील या फूली बनाने से होती है। इसकी यह विधि है—फिटकरी या सुहागे को बारीक पीस ले। फिर तवे पर मदी आंच पर इसे बुरका कर भूने। प्रथम इनके अन्दर का जल निकलेगा और तरल बन जावेगा, फिर भी दवा को चम्मच से चलाते रहे. थोडी देर बाद सारा पानी सूख जायेगा और दवा फूलकर डला या चूर्ण बन जावेगी। इस फूली को पीसकर काम मे लेवे।

(६) इस पुस्तक में कुछ थोडे से नुस्खो में 'शुद्ध शिलाजीत' का उल्लेख आया है। शुद्ध की हुई शिलाजीत बाजार मे दवा बेचते वालो के यहा मिलती है। घर पर शिलाजीत को शुद्ध करने की विधि बहुत कठिन है। फिर भी यदि कोई बनाना चाहे तो किसी अनुभवी वैद्य से परामर्श लेकर इसे तैयार कर सकता है।

(७) इस पुस्तक मे जो मात्राए लिखी हैं, वे पूरी उम्र (जवान) वाले लोगो के लिए समझनी चाहिए। बच्चो को उससे आधी या चौथाई मात्रा अथवा वय देखकर उससे भी कम देनी चाहिए। इसी प्रकार बहुत बूढे लोगो और गर्भवती स्त्रियो को मात्रा कुछ कम ही देनी चाहिए।

(८) यहा दवा की तौल रत्ती, माशे और तोले मे बनायी गई है। इन्हें नवीन प्रचलित बाटो मे इस प्रकार बदल कर काम मे लिया जा सकता है।

१ रत्ती	=	१२५ मिलिग्राम)	तरल—	
१ माशा	=	१ ग्राम)	१ तोला	१० मिली लीटर
१ तोला	=	१२ ग्राम)		

(९) **दवा देने का समय**—शास्त्र मे दवा लेने के अलग-अलग समय बताये गये हैं। प्रात.काल खाली पेट लेना, भोजन के ठीक पहले लेना, भोजन के बीच मे लेना, भोजन के बाद लेना, सायकाल के भोजन के बाद लेना, बार-बार लेना, भोजन के पहले और पीछे लेना, भोजन के साथ लेना, अन्न के ग्रास में मिलाकर लेना, दो ग्रासो के बीच लेना, रात मे सोने के समय लेना आदि।

व्यवहार में भोजन मे रुचि के लिए भोजन से पहले लेना, पित्त को शान्त करना हो तो भोजन के तुरन्त बाद क्षार आदि लेना, भूख बढाने वाली दवा भोजन के पहले और भोजन को पचाने वाली दवा भोजन के बाद, आतों की गति को ठीककर दस्त साफ लाने वाली दवा भोजन के एक दो घण्टे बाद और सभी रोग शामक दवाए आमाशय के खाली रहने पर सुबह और शाम लेनी चाहिए।

(१०) **रोगी की परिचर्या (सेवा-सुश्रुषा)** परहेज से—रहने का बीमारी के ठीक होने मे बहुत सहयोग मिलता है। घर के व्यक्तियो को रोगी के रहने, दवा देने और खाने पीने के लिए पूरी सावधानी और वैद्य के निर्देश का पालन करना चाहिए। लोलिम्बराज ने ठीक ही कहा है—"पथ्य से रहने पर औषधि की कोई आवश्यकता नही रह जाती और पथ्य के ठीक न रहने पर औषधि की कोई आवश्यकता नही अर्थात् पथ्य से न रहने पर दवा कोई प्रभाव नही कर सकती।"

(११) रोगी को हमेशा तरल, लघु और सुपाच्य आहार देना चाहिए। विश्राम करने से बीमारी जल्दी ठीक होती है। रोगी के रहने का स्थान हवादार तो हो, परन्तु उसमे तेज हवा के झोके न आने पावें।

अध्याय-४

बुखार (ज्वर-अंग्रेजी-फीवर)

पहिचान — सब बीमारियो मे बुखार सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। शरीर के स्वाभाविक तापमान का अधिक हो जाना 'बुखार' कहलाता है।

बुखार पैदा होने के अनेक कारण है। ठन्ड लगना,वर्षा मे भीग जाना, अत्याधिक शारीरिक और मानसिक श्रम करना, चोट लगना,तेज धूप या अग्नि के ताप मे काम करना या घूमना, भोजन की अनियमितता अधिक भोजन करना,अधिक समय तक भूखा रहना,नसीले पदार्थ-शराब आदि अधिक पीना, किसी विष का शरीर मे पहुचना, आमाशय या आतो की गडबड़ी, कब्ज रहना, दिन मे अधिक सोना, रात को जागना, आदि। इनके अतिरिक्त विशेष प्रकार के जीवाणुओ के शरीर मे प्रवेश करने से भी बुखार हो जाता है।

ज्वर मे सामान्य रूप से कोष्ठ की अग्नि विकृत होती है। मिथ्या (अनुचित) आहार और विहार के कारण आमाशय मे प्रकुपित वात, पित्त और कफ पहुचकर कोष्ठाग्नि को बाहर निकाल देते है और स्वय भी रस मे मिलकर सारे शरीर मे फैल जाते है।

सामान्य रूप से सभी प्रकार के बुखारो मे पसीना निकलना बन्द हो जाता है शरीर का ताप बढ जाता है और सारे शरीर में जकडाहट और पीडा प्रतीत होती है। इसी प्रकार मन मे बेचैनी, किसी काम मे मन न लगना और ग्लानि का अनुभव होना ये लक्षण भी पाये जाते है।

बुखार चढने से पहले विना काम किये ही थकान मालूम होना, सुस्ती रहना, मुह का स्वाद नष्ट हो जाना, आखों से पानी आना, ठण्ड-हवा-धूप कभी अच्छी लगना और कभी नही लगना, जम्भवाई आना, शरीर मे भारीपन मालूम होना, रोमाच होना, अधेरी आना, मन की प्रसन्नता न रहना और ठण्ड लगना आदि लक्षण मिलते हैं। इन लक्षणो के होने पर यह समझ लेना चाहिए कि कुछ ही देर बाद बुखार होने वाला है।

सामान्य प्रकार के बुखार मे उपरोक्त लक्षण होते है। विशिष्ट प्रकार के बुखारो मे अलग-अलग लक्षण होते है, इनका वर्णन हम आगे करेगे।

बचने के उपाय—इसी प्रकार के बुखारो से बचने के लिए यह आवश्यक है व्यक्ति नियमित और अपने द्वारा पच सके इतनी मात्रा में समय पर भोजन करे, ठण्ड से बचे और अधिक तेज धूप या गर्मी में न जावे, जल का उचित मात्रा मे सेवन करे, नशीली वस्तुएं अधिक प्रयोग मे न लावे शरीर को सहन हो सके उतना ही शारीरिक और मानसिक श्रम करे।

चिकित्सा.—बुखार चढते ही रोगी को ऐसे कमरे में सुलावे जहा तेज हवा नही आती हो, किन्तु मामूली हवा का आना-जाना बराबर रहता हो, रोगी को मुलायम बिस्तर पर लिटा-ओढने के लिए मोटा और गरम कपडा देवे। खाने को कुछ न दे। भूख लगी होने पर भी अन्न नही दे, गरम दूध, सावूदाना आदि हल्के पदार्थ दिये जा सकते है। पीने के लिए उबालकर ठण्डा किया हुआ जल देवे। इस पानी को रोगी को बार-बार पीने को देना चाहिए। अधिक मात्रा मे जल पीने से शरीरगत दोष और विष मल, मूत्र व पसीने से बाहर निकल कर बुखार हलका पड जाता है। परन्तु ठण्डा पानी कदापि नही पीवे। ब्रह्मचर्य का पूर्णतया पालन करे। बुखार की दशा में स्नान करना, मालिश करना, भोजन करना, दिन मे सोना, किसी भी प्रकार का शारीरिक और मानसिक परिश्रम करना, खुली तेज हवा में बैठना, चिन्ता या शोक या क्रोध करना—बिल्कुल छोड देना चाहिए।

उपर्युक्त पथ्य का पालन करते हुए पूर्ण आराम करने से मामूली बुखार बिना दवा के ठीक हो जाता है। रोगी को पसीना आये

तो तौलिये से पोछ देना चाहिये, पर ऐसी दशा मे बदन को पूरा खुला नही करना चाहिए।

कब्जियत या बदहजमी के कारण होने वाले बुखार में दस्त खुलकर लाने वाला और अग्नि को बढाने वाला मामूली जुलाब देना चाहिए। इसके लिए **'आरोग्यपंचक'** (हरड, कुटकी, अमलतास, निशोथ और आमला) का मिला हुआ जौकूट चूर्ण बना खावे। इसकी २ तोला मात्रा को आधा सेर जल में उबाले, चौथाई पानी बाकी रह जाय तो उबालकर छान ले। इसमे थोडा शहद मिला कर पिलावे। इससे बुखार उतरता है और पेट भी साफ हो जाता है।

छोटी हरड (जौहरड) का चूर्ण ६ माशा और काला नमक ४ रत्ती मिलाकर गुलगुने जल के साथ लेने से दस्त साफ होता है। सुकुमार लोगो को पेट साफ रखने के लिए मुनक्का (१० नग), अजीर (२-३ नग, टुकडे करके) जल या दूध मे उबालकर पीना चाहिए। इससे बुखार, खासी, जुकाम भी कम होता है और दस्त साफ आते है।

कफ ज्वर

पहिचान—कफ ज्वर मे शरीर भारी होता है, सरदी लगती है, रोगटे खडे होते है, नीद और ऊघ अधिक आती है, मुँह का स्वाद मीठा होता है और कफ से भरा रहता है। भूख नही लगती, पसीना नही आता, आलस्य होता है, बुखार तेज नही रहता. कफ की उल्टी होता है, शरीर ढीला पड जाता है, खासी, जुकाम, मल-मूत्र और नेत्र की सफेदी होती है।

चिकित्सा—[१] सोठ तीन माशा को १/२ पाव जल मे उबालकर, आधा बाकी रखे। फिर गुनगुने काढे मे ही मिश्री मिलाकर पीवे।

[२] काली मिर्च ५ नग, तुलसी के पत्ते ५ नग, लौग १ नग अदरक १/४ तोला और बडी इलायची १ नग को उपर्युक्त विधि से अथवा चाय के साथ उबालकर पीवे। इस प्रकार दिन मे ३ बार लेवें।

[३] छोटी पीपल का चूर्ण (४ रत्ती से १ माशा) शहद के साथ चाटने से श्वास, खासी के साथ बुखार को आराम करता है।

इससे पुराना और ठण्ड लगकर आने वाला, आंतरे से आने वाला बुखार (मलेरिया—विषमज्वर) भी ठीक होता है ।

[४] अदरख का रस (१/२ तोला) या पान का रस (१/२ तोला) मे शहद मिलाकर दिन मे २–३ बार चाटने मे कास, श्वास, प्रति श्याय (जुकाम) और कफजन्य बुखार दूर होता है ।

[५] कायफल, पोहकरमूल, काकडासीगी और छोटी पीपल (बराबर लेकर) सब का चूर्ण बना ले । ३ माशा चूर्ण को शहद में मिलाकर सुबह–शाम चाटने मे कफ ज्वर, खासी और कफ गिरना बन्द होता है ।

पित्तज्वर

पहिचान.—पित्त ज्वर मे बुखार तेज रहता है, दस्ते लगती है, नीद कम आती है, पित्तकी (कडवी–चरपरी) उल्टी होती हे गला होठ, मुख-नाक आदि मे पाक हो जाता है या उनमे छाले या फफोले पड जाते है, पसीना अधिक आता है, रोगी सोते समय बकवास करता है, मु ह का स्वाद कडवा हो जाता है, बेहोशी हो जाती है, जलन होती है, प्यास बहुत लगती है, गर्मी का नशा-सा चढा रहता है, नेत्र मल मूत्र का रंग पीला होता है, चक्कर आने लगते हैं ।

चिकित्सा—(१)१/२ तोला पित्त पापडा का चूर्ण रात मे१छटाक पानी मे भिगो देवे सुबह मसलकर छानकर रोगी को पिलावे । इसमे पित्त ज्वर, दाह, प्यास आदि दूर होते है ।

(२) ३ माशे सफेद जीरा और ६ माशे मिश्री के चूर्ण को ठन्डे जल के साथ फाकने से पित्त ज्वर शान्त होता हे अथवा ६ माशे जीरा को पानी में पीसकर मिश्री मिलाकर पिला दे ।

(३) कुटकी २ मा० को १/२ पाव जल मे उबाले, चौथाई शेष रहने पर उतारकर छानकर मिलाकर पिलावे ।

(४) चिरायता १ तोला को १ पाव जल मे उबाले, आधा बाकी रहने पर, उतारकर छानकर पीवे । (विशेष कुटकी और चिरायता से पुराना विषम ज्वर मलेरिया बुखार (ठन्ड) लगकर आतरे से आनेवाला बुखार) भी ठीक हो जाता है ।

(५) बुखार बहुत तेज होने पर उसे कम करने के लिए माथे

पर ठन्डे पानी की पट्टिया रखनी चाहिए ।

(६) मुनक्का, मुलेठी, नीम की छाल और कुटकी इनका काढा बनाकर रात भर ठण्डक मे खुला रख देवे । सुबह छानकर पिलावे । इससे पित्त ज्वर नष्ट होता है ।

(७) जवासा, पित्त पापडा, फूलप्रियगु, चिरायता. अडूसा और कुटको का काढा बनाकर मिश्री या शक्कर मिलाकर पीने से प्यास, खून गिरना, पित्त ज्वर और जलन शान्त होते है ।

(८) ५-७ लौंग जल के साथ घिसकर देने से तेज ज्वर कम होता है ।

वातज्वर

पहिचान —वात ज्वर मे कफ अधिक होता है, बुखार कभो कम और कभी अधिक होता है, गला-होठ, मुख बराबर सूखते है । छीक व नीद नही आती, शरीर मे अकडन होती है, खांसी अधिक होती है, सिर-हृदय और सारे अ गो मे पीड़ा होती है, मुख का स्वाद फीका मालूम होता है । जभाई अधिक आती है । कब्ज, अफारा और पेट मे शूल होता है ।

चिकित्सा —[१] बडे पचमूल (बेल सोनापाठा, खभार, पाढल, अरनी इन पाचो के मूल की छाल), गुडूची आवला और धनिया—इनको बराबर भाग मे मिला लेव । इसको २ तोला लेकर १ पाव जल मे उबाले शेष १ छटाक रहने पर छानकर पिला दे । इससे वात ज्वर शान्त होता है ।

[२] सौठ १ तोला और सैंधा नमक २ माशा इनका चूर्ण मिलाकर रखले । इसमे से १ से ३ माशा गरम जल से (दिन मे २-३ बार) दे तो तीव्र वात ज्वर शान्त होता है ।

अजीर्ण ज्वर

पहिचान —बदहजमी के कारण होने वाले बुखार में उदर मे पीडा होना, उलटी होना, दस्त होना ज्वर होना ये लक्षण होते है ।

चिकित्सा - (१) हरड, अजवायन और काला नमक समान मात्रा मे लेकर चूर्ण कर ले। ६ माशा चूर्ण गरम पानी से पीवे।

मल ज्वर

पहिचान —कब्ज होने पर गला सूखना, भ्रम होना (चक्कर आना), दाह होना, बकवास करना, सिर मे दर्द और बुखार, ये लक्षण होते है।

चिकित्सा –१) निशोथ और हरडका क्वाथ बनाकर उसमे अमलतास का गूदा १ तोला और मुसव्वर (एलुआ) ३ मा० मिलाकर पीने से दस्त साफ आता है और 'मलज्वर' ठीक हो जाता है।

(२) दोनो जीरे (सफेद और स्याह) चिता, हरड, अजवायन के चूर्ण को निम्बू के रस में घोटकर सुखाकर रख ले। ३ मा० चूर्ण गरम जल से देवें, तो मल खुलासे के साथ आता है और बुखार उतर जाता है।

जीर्ण ज्वर

पहिचान —तीन सप्ताह के बाद भी जब बुखार नही उतरता तो ऐसा बुखार पुराना या 'जीर्ण-ज्वर कहलाता है। इसमे कफ कम हो जाता है, वायु बढ जाता है और गहरी धातुओ मे घर कर लेने से प्राय मंद बुखार रहने लगता है। खून की कमी, भूख नही लगना, और प्लीहा बढ जाता - ये लक्षण होते है।

(यक्ष्मा और काल ज्वर में ३ सप्ताह के बाद भी बुखार बना रहता है, परन्तु वह जीर्ण ज्वर नही कहलाता, क्योकि इन रोगो मे लम्बे समय तक बुखार बने रहने की प्रवृत्ति होती है।

चिकित्सा —१) छोटी पीपल का चूर्ण ४ रत्ती. गुड १/२ तो० में मिलाकर, गरम जल के साथ खावे।

(२) छोटी पीपल का चूर्ण ४ र०, दूध में उबालकर पिलावे।

(३) कब्ज होने पर कुटकी चूर्ण ३ मा०, १/२ पाव जल में

उबालकर चौथाई रहने पर छानकर पिलावें।

(४) चिरायता ६ मा० पूर्वोक्त विधि से उबालकर पिलावे। गिलोय के रस १ तो० मे पीपल का चूर्ण २ र० मिलाकर पिलावे।

(५) गिलोय २ तो० को कुचलकर १ पाव जल मे उबालकर चौथाई रहने पर छानकर शहद व पीपल का चूर्ण २ रती मिलाकर पिलावे।

(६) गिलोय का सत्व १ मा०, गोदन्ती की भस्म १ मा०, वशलोचन ४ र० और पीपल का चूर्ण २० मिलाकर शहद के साथ सुवह और शाम चटावे।

(७) नीम की भीतरी छाल का काढा पिलावे।

(८) धनिया और पित्त पापडे का काढा, मिश्री मिलाकर पिलावे। इससे जलन भी शात होती है।

(९) दारु हल्दी ३ तो० को कुचल कर ३ पाव जल मे उबाले १ पाव वाकी रहने पर छानकर दिन मे दो वार पिलावे। यह सब प्रकार के जीर्ण ज्वर में हानि रहित दवा है।

बुखार उतरने के लक्षण

बुखार के हटने पर पसीना आता है। सारा शरीर हल्का प्रतीत होता है, सिर में खुजली होती है मुँह पक जाता है और भोजन की इच्छा होती है।

बुखार उत्तर जाने पर क्या न करें

बुखार उत्तर जाने पर भी निम्न बातो का परहेज तब तक करना चाहिए जब तक व्यक्ति फिर से बलवान नही हो जाता।

(१) व्यायाम परिश्रम (२) मैथुन (३) स्नान (४) घूमना।

इनका परहेज नही रखने पर बुखार फिर से हो जाता है और कमजोरी बढ जाती है।

प्रचलित विशिष्ट आगन्तुज (संक्रामक) छूत से फैलने वाले ज्वर

सन्निपात ज्वर, आंत्रिक ज्वर, मंथर ज़्वर मुक्ता ज्वर, टाईफाईड फीवर

पहिचान—(योगरत्नाकर में इस ज्वर का वर्णन 'मन्थर ज्वर' या 'मधुर ज्वर' के नाम से किया गया है। इसे मोतीझरा भी कहते है। यह एक सक्रामक ज्वर है यह त्रिदोप या सन्निपात से होता है सतत ज्वर लगातार रहने वाले बुखार का प्रकार है। इसमें मुख्य विकृति छोटी आतो की ग्रथियो मे सूजन और घाव के रूप मे होती है। बुखार निरन्त २१ दिन तक वना रहता है। सिर मे पीडा, नाडी की गति वन्द होना, उदर का वायु से फूलना ओर दर्द होना, पतले दस्त लगना, जीभ वीच मे भैली और किनारे पर लाल होती है। नाड़ी ज्वर की अपेक्षा मद होता है। उदर पर दाहिने लक्षण प्रदेश पर दवाने से पीडा और गुडगुडाहट होतो है। रोगी हमेशा ऊधने जैसी दशा (तन्द्रा) में रहता है। चमडी पर सरसो जितने वडे सफेद चमकदार मोती जैसे या हल्के गुलावी रग के दाने पाये जाते है प्लीहा भी कुछ वढ जाती है।

वुखार प्रारम्भ होने के वाद पहले सप्ताह मे बुखार धीरे-धीरे वढता जाता है। सुवह बुखार कम होता है और शाम को १०३-१०४° पर तक हो जाता है। दूसरे सप्ताह में वुखार प्राय एक समान बना रहता है और १०४-१०५° तक रहता है। तीसरे सप्ताह मे धीरे-धीरे उतरने लगता है। रोगी दुर्वल हो जाता है। चौथे सप्ताह मे बुखार बिल्कुल उतर जाता है।

दूसरे हफ्ते मे सुवह और शाम के बुखार मे वहुत अलप अन्तर (१-२ फा० डिग्री का) होता है। इसी सप्ताह मे आतो में रक्तस्राव होना और घाव वनने की सभावना रहती है। अत इस काल में पूरी हिफाजत रखनी चाहिए।

बचने के उपाय—यह बुखार पानी में जीवाणु के होने के कारण होता है। कभी-कभी वर्षा और शीत ऋतुओ के प्रारम्भ में महामारी के रूप में फैलता है। इन कालो में मक्खिया जीवाणुओं को एक जगह से दूसरे जगह ले जाने का काम करती हैं तथा जल और खाद्य वस्तुएं भी दूषित हो जाती है। इससे बचने के लिए, पानी उबालकर पीये, ताजी और हरी सब्जियाँ व फलो का प्रयोग करे, सडे गले फलो को न खाये। इन चीजो को इस्तेमाल करने से पहले साफ जल से या लाल दवा मिले जल से धो लेवे। भोजन भी ताजा और हल्का करे। भरपेट न खाये। पेट की गडबडी और अजीर्ण न होने देवे। कब्ज भी न रहने देवे गंदी नदी, तालाब, बावडियो का जल न पीवे। रोगी के सम्पर्क में आने वाले बर्तन, कपडे फर्नीचर आदि को साफ किये बिना दूसरे व्यक्ति इस्तेमाल न करे।

चिकित्सा—(१) रोगी को बिस्तर पर पूर्ण आराम करना चाहिए। उसे हिलने-डुलने भी न दे।

(२) तीव्र ताप हो (१०३ फा० से अधिक) तो सिर पर ठण्डे पानी की पट्टिया रखे।

(३) पेट में दर्द अधिक हो तो गर्म जल की थैली से हल्का सेक करे।

(४) रोगी को खाने को कुछ नही देवे। केवल दूध, जौ के पानी अथवा फलो के रस (अँगूर का रस या मीठे अनार का रस, मोसम्मी का रस) दे सकते है। बुखार उतरने लगे तो चावल की खील को जल मे उबालकर पिलावे।

(५) रोगी को हमेशा पीने के लिए लौग का पानी देवे। १ तोला लौग को कूटकर १२८ तोला पानी मे उबाल कर जब आधा बाकी रहे तो उतार कर छानकर ठण्डा कर लेवे। इस जल को बार-बार पीने को देवे। उबालकर ठन्डा किया हुआ पानी ही पिलाना चाहिए।

(६) सफेद जीरा, गिलोय, पद्‌नाख, इन्द्रजौ, चिरायता, बडी इलायची—इन सबको पानी में उबालकर काढा पिलाना चाहिए।

(७) मोतीझरा के पहले सप्ताह में प्राय. कब्ज रहती है।

अमलतास का गुदा १ तोला और मुनक्का ५ नग उबालकर छानकर सुबह पिलाना चाहिए ।

(८) खूबकला ३ मासा, गावजुवा ३ मासा, गुलबनफशा ३ मा०, तुलसी के पत्ते १०, गिलोय १/२ तोला, ब्राह्मी १/२ तो०, और काली मिर्च ५ नग, लेकर मिला लेवे । लगभग २ तोले को आठ गुने जल मे पकावें । आधा जल शेष रहने पर उतारकर छान ले । ठण्डा होने पर दिन मे २ बार सुबह और शाम को पिलावे ।

(६) खूबकला १ तोला और मुनक्का १ तोला अथवा केवल खूबकला १ तोला का काढ़ा वनाकर प्रात सायम् पिलावे ।

कर्कटक सन्निपात ज्वर
(श्वसनक ज्वर-न्यूमोनिया)

पहिचान—इस बुखार में वात और कफ की अधिकता होती है। किन्तु इसकी यह विशेषता है कि बुखार बहुत तेज चढता है। रोगी मे ठन्ड लगने या पानी मे भीगने का इतिहास मिलता है। यकायक ठण्ड लगकर बुखार चढता है और कुछ ही घण्टो मे बहुत तेज हो जाता है (१०४°)। खांसी चलती है, सास फूलता है, पसलियो मे दर्द होता है। सास की गति तेज और उथली होती है, ऐसा लगता है मानो रोगी ऊपर ही ऊपर सास ले रहा हो। सास और नाडी को गति मे प्राकृत रूप में १ अनुपात ४ का अन्तर होता है (अर्थात् प्राकृत दशा में सास १ वार प्रति मिनट चलता है और नाडी की गति ७२ प्रतिमिनट होती है) यह अनुपात इस बुखार मे १ . ३ या १ २ हो जाता है, क्योकि इसमे साँस वहुत तेज चलता है। यदि रोगी वालक हो तो नाक के नथुने तेजो से हिलते—फडकते दिखाई देते हैं। वालको मे प्रारम्भ मे ठण्ड लगने के वदले आक्षेप (हाथ पैरो मे झटके) होते है।

३-४ दिन के वाद खासी के साथ चिपचिपा मटमैला लाल रग का कफ वहुत मुश्किल से खासने पर निकलता है। जीभ मैली रहती है। चमडी सूखी रहती है। नेत्रो और नखो मे नीलापन आ जाता है। इस रोग मे हृदय वहुत दुर्वल हो जाता है और बीमारी का जहर सारे शरीर मे वहुत फैल जाता है, जिससे घवराहट वहुत होती है।

जिस ओर का फेफडा आक्रान्त होता है, उदर के पसवाडे मे वेदना वहुत तेज होती है, और उससे रोगी चिल्लाता है। दोनो ओर के फेफडो के आक्रान्त होने पर 'डवल निमोनिया' कहलाता है। अक्सर बुखार एक सप्ताह तक रहकर अचानक कम हो जाता है। इस समय पसीना और पतले दस्त हो सकते है। रोग की अवधि १०-१२ दिन की होती है।

वचने के उपाय—(१) ठण्ड से वचना चाहिए।

(२) रोग-ग्रस्त रोगी को दूसरे लोगो से अलग रखे।

चिकित्सा—(१) रोगी को पूर्ण विश्राम कराना चाहिए।

(२) इस बुखार में प्राय कब्ज रहती है। अतः हरड १ तोला अमलतास १ तोला और मुनक्का १ तोला का काढा बनाकर पीने को देना चाहिए।

(३) अडूसा १ तोला और लिसोडा २ तोला को १ पाव पानी में औटाकर आधा रहने पर थोडी मिश्री मिलाकर पिलावें।

(४) पसली के दर्द के लिए बारहसिंगे का सीग घिसकर छाती पर लेप करें अथवा अरंड के पत्ते गरम कर पसलियो पर बांधे अथवा नमक की पोटली से सेक करना चाहिए अथवा पुराना घी और सेंधा नमक मिलाकर छाती पर मलना चाहिए।

(५) सांभरसीग की भस्म ४ रत्ती सुबह शाम शहद के साथ देने से पसली का दर्द कम होता है।

(६) लाल फिटकरी को आग पर पकाकर बनायी हुई खील का चूर्ण (३ रत्ती), दिन मे ३-४ बार शहद से चटावें। इससे कफ पतला होकर निकल जाता है और बुखार मे भी आराम होता है।

●●

श्लेष्मोल्वणसन्निपात ज्वर
(श्लेष्मक ज्वर-इंफलुएंजा)

पहिचान—यह कफज ज्वर का एक प्रकार है। यह भी औपसर्गिक रोग है। रोगी के खासने के समय निकले हुए थूक के कफो के द्वारा दूसरे व्यक्ति के शरीर मे सक्रमण पहुचने से होता है।

ठण्ड लगकर शिर और हाथ-पैर में टूटने जैसी पीडा होने के साथ बुखार चढता है। और जुकाम के लक्षण, जैसे—छीक, खासी, गले मे दर्द, आखो मे पानी आना, आखे लाल होना, होते है। जीभ मैली रहती है। रोगी वहुत कमजोर हो जाता है। किसी काम मे उसका मन नही लगता। गला सुर्ख हो जाता है। पाच छ दिन वाद पसीना आकर वुखार उतर जाता है।

इस वुखार मे सारे वदन मे वहुत दर्द और कमजोरी हो जाती है। इसमें जुकाम के सव लक्षण होते है। कभी-कभी यह बसन्त और शीत ऋतुओ मे महामारी के रूप मे फैलता है, तव यह मारक (घातक) होता है। इससे कुछ लोगो, विशेषकर बालको और वृद्धो की मौतें भी हो जाती है।

बचाने के उपायः—(१) भीड-भाड वाले स्थानो पर जाने से वचना चाहिए। (२) ठण्ड से वचाव रखना चाहिए (३) गरम, हलका और स्वास्थ्य-वर्धक भोजन करे। (४) गले को साफ रखे। इसके लिए नमक गरम पानी मे डालकर गरारे करे। (५) छीकते खासते समय रूमाल का इस्तेमाल करे, फिर उसे उबलते पानी में धो लें। इससे दूसरे पर सक्रमण नही पहुच सकता।

चिकित्सा—इसमे जुकाम की सव दवाए देनी चाहिए। विश्राम करना आवश्यक है। गरम कपडे पहने। रोगी को ठण्ड से वचावे। रोगी को ऐसे कमरे मे रखा जाय, जहा सीधी तेज हवा तो नही आये, पर शुद्ध हवा का आना-जाना होता रहे। स्नान न करे। खाने के लिए कुछ न दे। लघन कराये अथवा हल्का तरल

आहार देवे। खट्टे व ठन्डे पदार्थ न देवे। सोठ या पीपल डालकर उबाला हुआ दूध पीने को दे। इससे वदन का दर्द भी ठीक होता है। कमजोरी मिटाने के लिए अजीर २ नग (टुकडे कर) और उन्नाव (१० दाने) दूध मे उबाले, अजीर और उन्नाव रोगी खा लेवे, गुठलिया फेक दे तथा ऊपर से दूध पी लेवे। उबाले हुए १ कप पानी में आधा नीवू निचोडकर रस मिलाकर गरम-गरम एक-एक घूट पीते रहे। गले को साफ रखने के लिए नमक मिले हुए गुनगुने पानी के गरारे करे। गले को भाप से सेके।

●●

कनफेड या कनसुआ या गलसुआ (कर्णमूलिक शोथ ज्वर, मम्पस)

पहिचान — यह रोग प्राय: बच्चो और किशोरो को होता है । रोगी के खासते समय थूक और कफ की बूदो द्वारा दूसरे के शरीर मे सक्रमण पहुचने से कान के पास स्थित लार की ग्रन्थियो (कर्णमूल-ग्रन्थि) मे सूजन पैदा करता है । यह सूजन कान के सामने और नीचे के भाग में होती है । इससे उनमे बहुत दर्द होता है, परन्तु ग्रन्थियो मे पीप नही बनती । कभी-कभी नीचे के जबडे की नीचे की ओर जीभ के नीचे की लार ग्रथियो मे भी सूजन पैदा हो जाती है । प्रारम्भ में एक ओर की ग्रन्यि में सूजन व दर्द होता है । बुखार (१०२° फा० से १०४° फा०) रहता है, जो एक सप्ताह में शात हो जाता है । ग्रन्थियो में सूजन तनाव और दर्द के कारण मुह खोलने मे तकलीफ होती है । ३-४ दिन बाद दूसरी ओर की ग्रन्थि में भी सूजन व दर्द होता है । यह बीमारी तेजी से फैलती है परन्तु मृत्यु नही होती । सिरदर्द, कान में दर्द, स्वर बैठ जाना, बेचेनी रहना, निगलने मे तकलीफ और लार अधिक गिरना—ये लक्षण भी होते है । रोग की अवधि १० दिन होती है । दस दिन बाद बुखार उतर जाता है ।

बचने के उपाय — (१) जिन बच्चो मे यह बीमारी हुई हो, उन्हे दूसरे बच्चों से पन्द्रह-बीस दिन तक अलग रखे और स्कूलों मे जाने से भी रोके ।

(२) गले को साफ रखने के लिए गरम पानी मे नमक डालकर गरारे करवाये ।

(३) जिन बर्तनो व कपड़ो को रोगी ने काम मे लिया हो, उनका दूसरे बच्चो के लिए इस्तेमाल न करे ।

(४) गर्म व ताजा भोजन करे ।

चिकित्सा — [१] रोगी को विस्तर पर पूर्ण विश्राम कराये । हवा और ठण्ड से बचाये ।

(२) उबाल कर रखा हुआ जल पीने को दे लघन करावे ।

(३) नमक मिले हुए गर्म पानी से गरारे करे ।

(४) ग्रंथि की सूजन पर सेक करे (नमक की पोटली या कपड़े से या गर्म पानी की थैली से) ।

(५) ग्रन्थि की सूजन पर कालीजीरी को पीसकर गरम कर लेप करे ।

(६) पेट साफ करने के लिए अंजीर और मुनक्का दूध में उबालकर देवे ।

(७) सूजन पर धतूरे की पत्तियों के रस का लेप करे ।

(८) वचनाग की जड पानी मे घिसकर गरम कर सूजन पर लेप कर सकते है ।

कमर-तोड़ बुखार : दराडक ज्वर डेन्गयू फीवर

चिकित्सा—यह एक प्रकार के मच्छर के काटने से इस रोग के वाईरस का शरीर मे प्रवेश होने से पैदा होता है। इसलिए इस रोग का प्रसार सीलन वाले क्षेत्रो मे वर्षा और वसन्त ऋतु मे होता है। यह रोग आसाम, वगाल, हिमालय की तराई, वम्वई और मद्रास प्रान्तो में अधिक होता है।

यह रोग अचानक प्रारम्भ होता है। बुखार शीघ्र ही १०४ डिग्री तक हो जाता है। हाथ, पैर, शिर, कमर और सारे शरीर मे डण्डो से पीटे हुए के समान वहुत दर्द होता है और अकडन होती है। चमडी पर छोटे गुलावी रग के दाने निकल जाते है। नाडी की गति मद रहती है। वुखार की अवधि सात दिन होती है। इस अवधि को तीन भागो मे वाटते हैं। प्रारम्भ मे बुखार तेज रहता है, वीच मे ३-४ दिन साधारण बुखार रहता है और अन्त मे पुन तेज होकर उतर जाता है और चमडी पर दाने निकल आते है। रोगी मरता नही।

बचने के उपाय—(१) मच्छरो से यह रोग फैलता है, अत मच्छरो का नाश करे। सीलन न रहने दे।

(२) सोते समय मसहरी का उपयोग करे और शरीर पर सरसो का तेल लगाकर सोवे।

चिकित्सा—इस बीमारी मे विशेष औषधि देने की आवश्यकता नही होती। वल्कि अधिक दवा देने से नुकसान हो सकता है।

(१) वदन के दर्द को कम करने के लिए दशमूल का काढा, सोठ का चूर्ण (४ रत्ती) मिलाकर पीवे।

(२) कालीमिर्च ३ माशा और नीम के १ तोला पत्तो को पीस कर आधा सेर जल मे उवाले और ४ तोला शेष रहने पर छानकर रोगी को वार-वार पीने को दे।

(३) नीम की अन्तर-छाल का काढा पिलावे।

सन्निपात ज्वर—आमवातिक ज्वर, सन्धिक ज़्वर, ह्यूमेटिक फीवर

पहिचान —यह वात-कफ की अधिकता वाला सन्निपात ज्वर है । बाल्यावस्था और यौवनारम्भ मे यह प्राय. होता है । ३० वर्ष की आयु के बाद यह प्राय नही होता ।

इसका यकायक ठण्ड और सन्धि (जोड) मे दर्द के साथ तेज बुखार (१०२–१०४ डि० फा०) चढकर प्रारम्भ होता है । बुखार और जोडो का दर्द साथ ही प्रारम्भ होते है । खट्टा पसीना निकलना, पेशाब कम आना और हड्डियो के किनारो पर गाठे पैदा हो जाना—इसके अन्य लक्षण है । इसके कारण शरीर की सारी जोडे प्रभावित हो सकती है । परन्तु घुटने और कोहनी के जोड अधिकतर प्रभावित होते है । इनमे सूजन और दर्द होता है । बच्चो मे इस बुखार के कारण हड्डियो के जोडो मे सूजन आती है, नही भी आती, परन्तु हृदय की पेशी मे सूजन हो जाती है और उसका आकार बढ जाता है । हृदय के दो फलक वाले दरवाजे के समीप हृदय की भीतरी तह मे खास तौर से विकृति होती है । तीस साल की आयु के बाद महाधमनी के दरवाजे के समीप हृदय मे विकृति हो जाती है । खून की कमी हो जाती है । इस रोग के बार-बार दौरे पडते है । जिससे रोगी बहुत दुर्बल हो जाता है । जोड पर सूजन और गर्मी रहती है, फिर भी चमडी सफेद रहती है । बुखार हमेशा रहता है ।

चिकित्सा —[१] रोगी को पूर्ण विश्राम आवश्यक होता है ।

[२] खाने को कुछ न दे । लघन करावे । केवल दूध दे । पचकोल [सौठ, काली-मिर्च, पीपल, चव्य और चित्रक] का चूर्ण ३ माशा १ पाव दूध मे उबालकर पीने को दे, तो अच्छा रहता है ।

[३] सौठ के काढे मे एरण्ड का तेल [१–२ तोला] डालकर पीवे ।

[४] सूजन वाले स्थान पर बालु या नमक की पोटली से सेक करें। इससे दर्द व सूजन कम होते है।

[५] अमर लेल या धतूरा या निर्गुण्डी की पत्ती बाधकर, गरम कर सूजन पर बाधने से भी आराम होता है।

[६] पचमूल [वेल, अरण्डी, अरलू, गंभारी, पाढल—इनकी जड की छाल] २ तोला, जल ३२ तोला, उबालकर बाकी ८ तोला रखे, छानकर उसमे १ माशा छोटी पीपल का चूर्ण मिलाकर पिलावे।

[७] ५ तोला कुलथी को १६ गुने जल में [८० तोला] मे उबालकर १० तोला शेष रहने पर उसमें ३ माशे सौठ और थोडा-सा सेधा नमक मिलाकर पिलावे।

४-ग्रन्थिक ज़्वर (वातालिका ज्वर : प्लेग)

पहिचान—यह वात की अधिकता वाला त्रिदोपज ज्वर है। इसका कारण जीवाणु का सक्रमण है। ये जीवाणु चूहो के शरीर पर रहने वाले पिस्सूओ के द्वारा मनुष्य के शरीर मे काटने से पहुचते है। यह बीमारी बहुत घातक है और महामारी के रूप मे फैलती है। अचानक बहुत तेज बुखार चढता है। बीमार की आखे लाल हो जाती है, चेहरा फूला हुआ मालूम पडता है और चिन्तित रहता है। जीभ सूखी और मैली होती है। चूहो के मरने का इतिहास मिलता है। गिल्टिया खासकर जाघो मे सूज जाती है। पेशाव ललाई मिला होता है। बीमार अत्यन्त कमजोर हो जाता है, चलने मे लडखडाता है। स्वर बैठ जाता है और तन्द्रा रहती है।

बचने के उपाय—(१) प्लेग से पीडित होकर चूहो के मरना प्रारम्भ होते ही प्लेग का प्रतिवधक टीका लगा लेना चाहिए।

(२) पानी, भोजन और अनाज को चूहो की पहुच से दूर रखना चाहिए।

(३) चूहो के नाश के लिए विषैली दवाओ व पिंजरो का इस्तेमाल करना चाहिए।

(४) घर का फर्श और कपडो को साफ रखे।

(५) घर मे गूगल, राल, नीम के सूखे पत्ते, सरसो, अगर और लोबान मिलाकर धूप देना चाहिए।

चिकित्सा—(१) गिल्टियो को पुल्टिस बाधकर पका डाले और फूटने पर बहने दे। रोगी को सान्त्वना देवे।

(२) गिल्टियो पर कालीजीरी पीसकर गरम कर के लेप करे। अथवा राई पानी मे पीसकर लेप करे।

ग़र्दन तोड़ बुखार-आक्षेपक ज्वर मेनिंजाईटिस

पहिचान—रोगी के थूक या नाक से स्राव की बिंदुओ द्वारा इसके जीवाणु स्वस्थ व्यक्ति के शरीर मे पहुचकर मस्तिष्क और सुषुम्ना पर चढी हुई झिल्ली (मेनिजेज) में सूजन पैदा कर देता है। यह रोग ५ वर्ष से कम आयु वाले बालको मे अक्सर होता है। शीत और वसन्त ऋतु मे अधिकतर होता है।

बीमारी का प्रारम्भ अचानक होता है। सिर के पिछले भाग मे पीडा, जुकाम, उल्टी होना, ज्वर (१०२-१०४ डिग्री फा०) गर्दन, छाती और कमर की पिछली पेशियो मे वेदना, और जकडन होती है। इन पेशियो के तनाव के कारण सिर और शरीर, पीछे की ओर मुड जाता है और गर्दन कडी हो जाती है। मस्तिष्क के प्रभावित होने से रोगी वकझक करता है। सिर मे तेज दर्द होता है। शरीर पर लाल, काले या गुलाबी रग के दाने निकल आते है। अत यह **दानेदार बुखार** कहलाता है। यह बीमारी २-४ दिन से कुछ महिनो तक रहती है। रोगी के ठीक होने पर भी कुछ आंगिक निष्क्रियताएं रह जाती है।

बचने के उपाय—(१) रोगी को अस्पताल या घर मे पृथक रखना चाहिए।

(२) मनुष्यो की भीडभाड की जगह मे इस रोग के होने की अधिक सभावना रहती है। अत भीड वाले स्थानो से दूर रहे।

(३) अथिक श्रम और थकान न होने दे।

चिकित्सा—(१) पेशाब लाने वाली दवाएं अधिक वरते। इसके लिए जौ-खार (१ से ३ माशा तक) गरम पानी मे मिला कर दे। जल का सेवन अधिक करे।

(२) कब्ज नही रहने दे। (३) पूर्ण विश्राम करे। (४) केवल दूध पर रोगी को रखे। (५) दशमूल-क्वाथ (१-२ तोला) जल में उबालकर दिन मे २ बार दे।

(६) योग्य चिकित्सक की सलाह ले। यह रोग घातक होता है, अत लक्षण प्रारम्भ होते ही चिकित्सा प्रारम्भ कर देनी चाहिए।

(७) नीम की अन्तर-छाल के काढे मे, काली-मिर्च का चूर्ण (४ रत्ती) मिलाकर पिलावे।

रोहिणी [डिफथेरिया]

पहिचान—यह अधिकतर दस-बारह वर्ष की उम्र तक के बालको मे होता है। शरीर में इसके जीवाणुओं का प्रवेश रोगी को खासते समय निकले हुए थूक की बिन्दुओं अथवा आहार के द्वारा मुख से होता है।

बालको मे यह बहुत घातक रोग है। यह कंठ में होने वाली विकृति है। साधारण बुखार (१०२ से १०३ डिग्री फा० तक), कण्ठ में सफेद झिल्ली बनना, गले की ग्रन्थियो मे सूजन, गले में सूजन, अत्यन्त कमजोरी, निगलने में कष्ट, श्वास लेने में रुकावट, नाक मे सूजन और नाक से (प्राय एक नाक से) लाल रग का स्राव होता है। तालु और आख की पेशियो में लकवा हो जाता है। नाक में सूजन और पानी बहने की दशा मिलने पर तुरन्त इस रोग की संभावना करनी चाहिए।

रोगी की मृत्यु सांस घुटने के कारण होती है।

बचने के उपाय—(१) जिन बच्चो में यह रोग हो गया हो उनको दूसरे बच्चों से दूर रखे।

(२) अशुद्ध हवा, गदगी, अधिक गर्मी, दूषित गैस आदि का घर व विद्यालय में निवारण करना चाहिए।

(३) गले को साफ रखें।

चिकित्सा:—(१) रोगी को पूर्ण विश्राम कराये और हल्के व गर्म तरल आहार पर रखे। सोठ डालकर उबाला हुआ दूध पीने को दे।

(२) सुहागे की खील का चूर्ण (२ रत्ती), साफ किया हुआ नौसादर (४ रत्ती और सोठ कालीमिर्च और पीपल का चूर्ण (१ मा.) मिलाकर चटावे।

(३) साभरसीग को भस्म (४ रत्ती) शहद व अदरक का रस (१/२ तोला) मिलाकर चटावे।

शीतला, बड़ी माता या चेचक (मसूरिका-स्माल पोक्स)

पहिचान—यह रोग खासकर छोटे बालको मे, वसन्त और ग्रीष्म ऋतुओ में महामारी के रूप मे फैलता है। खराब हुआ पित्त और रक्त इसका कारण है। यह बालको के लिए घातक रोग है। खासते समय निकली हुई थूक की बूंदो से इसके वाईरस शरीर में प्रवेश करते है। रोग का आरम्भ यकायक होता है। पहले सिर-दर्द, हाथ, पैर, पीठ और कमर मे पीड़ा और कपकपी के साथ तेज बुखार (१०२-१०४ डिग्री फा०) हो जाता है। इसके साथ जी मिचलाना उल्टी, आक्षेप और आंखो मे लालिमा पायी जाती है। तीसरे या चौथे दिन बाद बुखार कम हो जाता है और बदन पर दाने निकल आते है। खासकर ये दाने शरीर पर दूर के हिस्सो, जैसे, चेहरा, हाथ पैर आदि पर अधिक और बीच के हिस्सो, जैसे पेट छाती, जाघ आदि पर कम निकलते है। वैसे सारे बदन पर दाने निकलते है। दाने पहले छोटे, फिर बढे हो जाते है और उनमे पानी-सा द्रव भरा रहता है। पाचवे या छठे दिन इन दानो मे पीप पड जाती है, तब बुखार फिर तेज हो जाता है। ये दाने समीप-समीप होने पर फूटने पर घाव का रूप ले लेते है। (कभी-कभी आतो, स्वरयत्र और श्वास-नलिका में भी दाने निकल आते हैं।) अन्त में ये छाले सूख जाते है और खुरण्ड उतरने- लगती है। रोग की पूरी अवधि दो सप्ताह की होती है।

बचने के उपाय—इस रोग का प्रसार सूखते हुए छालो से निकलने वाली खुरण्ड के कणो के वायु द्वारा शरीर मे पहुँचने से होता है। अत इस बात का पूर्ण ध्यान रखें कि स्वस्थ बच्चो को रोगी बच्चे से बिल्कुल दूर रखे। रोगी की परिचर्या करने वाले व्यक्ति के सम्पर्क मे भी अन्य व्यक्तियो को नही आना चाहिए। रोगी के थूक, नाक का स्त्राव, कफ आदि को एकत्रकर जला देना चाहिए। रोगी को तब तक अलग रखे जब तक उसके सब खुरण्ड उतर न जाये। रोगी की मृत्यु हो जाने पर उसे जला देना चाहिए। चेचक का टीका

लगाना—छोटे बच्चों के बचाव का अच्छा उपाय है। यह प्रथा भारत में प्राचीनकाल से विभिन्न रूपो मे प्रचलित रही है।

चिकित्सा :— (१) रोगी को स्वच्छ हवादार, किन्तु तेज हवा से रहित, स्थान पर पूरा आराम कराते हुए रखें।

(२) आहार में केवल दूध तथा अंगूर-अनार-मोसम्बी आदि मीठे फलो का रस देवें।

(३) रोगी के घावो पर मक्खियों को न बैठने दे। इसके लिए सुगन्धित धूप दें और नीम के पत्तो से हवा चलायें।

(४) मुलेठी का काढा पिलावे। इससे दस्त साफ आकर रोग का जोर कम हो जाता है।

(५) त्रिफला के काढे में शुद्ध की हुई गुगुल (४ रत्ती) डालकर सुबह शाम पिलावें। इससे व्रण जल्दी भरते हैं।

(६) वैसे इस रोग में प्रायः औषधि नही दी जाती। गरमी की ऋतु हो तो दूध और घी देते हैं।

(७) १०-१२ दिन के बाद पानी मे नीम की पत्ती उबालकर उस पानी से स्नान करवाते हैं। और वायु की शुद्धि के लिए घर में नीम की पत्तिया लटका देते है। इससे मक्खियां और मच्छर भी कमरे प्रवेश नही करते।

(८) लाल चन्दन, अडूसा, नागरमोथा, गिलोय और मुनक्का का क्वाथ बनाकर ठण्डाकर पिलावे। इससे दाह शान्त होता है।

अचबड़े या छोटी माता
चिकन पॉक्स

पहिचान—पित्त-रक्तज बीमारी है, जो बालको मे अधिकतर होती है, बडी माता के समान ही इसमे भी लक्षण होते हैं, परन्तु उससे कुछ सौम्य स्वरूप के होते हैं।

इसकी महामारी शीत और वसन्त में फैलती है। यह रोग बडी माता से कम भयंकर होता है। यह रोग मंद ज्वर, बेचेनी और त्वचा पर दाने निकलने के साथ यकायक आरम्भ होता है। चेचक और इसमें यह अन्तर है कि चेचक मे दाने ३ दिन बाद निकलते हैं और इसमें दाने आरम्भ में अर्थात् पहले दिन में ही निकल आते है। इसके अलावा इसके दाने शरीर के मध्यवर्ती स्थानो जैसे कंधे, छाती, पीठ, पेट और जाघ पर अधिक निकलते हैं, जबकि चेचक के दाने दूरवर्ती स्थानो —चेहरा और हाथ पैर पर, अधिक निकलते हैं। छोटी माता के दाने छोटे होते हैं और आपस मे मिलते नही। इन दानों में आरम्भ से ही द्रव (जलीय) भरा होता है। इनमें पीप नही पडती। अन्त मे दाने सूखकर पपडिया गिरने लगती हैं। इनके गिरने पर चमडी पर दाग नही पडते। छोटी माता से रोगी की मृत्यु नही होती और टीका लगाने से इसका खास प्रतिबन्ध भी नही होता। अत. यह बच्चो में बार-बार हो सकता है। रोग की अवधि ८-१० दिन होती है।

बचने के उपाय:—(१) रोगी से स्वस्थ बच्चो को दूर रखें।

(२) घर में स्वच्छता रखे।

चिकित्सा.—बडी माता की चिकित्सा के समान।

बोदरी माता : खसरा - रोमांतिका

पहिचान :—यह विगडे हुए कफ और पित्त से होता है। छोटे बच्चो मे सबसे अधिक होता है। यह अत्यन्त सक्रामक रोग है। इसका कारण भो वाइरस है।

प्रारम्भ मे ठण्ड लगकर बुखार (१००-१०२ तक), सिर, दर्द जुकाम, सूखो खासो, छीक आना, आख व नाक से पानी वहना, आखों का चौधिया जाना (प्रकाश सहन नही होना), आखो का लाल होना और गला वैठ जाना – ये लक्षण होते हैं। इस प्रकार ये लक्षण सामान्य जुकाम—खासी से मिलते जुलते है। मुंह के अन्दर दोनो गालो पर अगलो डाढो के पास, नोले सफेद धव्वे निकल आते हैं, जिनके चारो और लालिमा पायी जाती है। इन धव्वो को 'कोपलिक के धव्वे' कहते है। यह रामान्तिका का खास लक्षण है। इनमें उल्टो नही होता।

चार दिन वाद चमडी पर उभार निकल आते हैं। ये दानो के रूप में नही होते, वलिक लाल चकत्तो के रूप मे होते हैं। इनमे खुजली और जलन होती है। सवसे पहले ये चकत्ते कानो के पीछे और माथे के ऊपरी भाग मे निकलते हैं और लगभग सारे चेहरे में छा जाते है। इन चकत्तो के निकलने पर बुखार कम हो जाता है, पर फिर एक दिन वाद वढ जाता है (१०३-१०४ डि फा तक)। इस समय रोगी की सम्भाल ठीक नही रहने पर श्वसनक ज्वर (निमोनिया), कुकुर खासी राजयक्ष्मा, अतिसार आदि भयकर विकार हो जाते है।

७ से ९ दिन के बाद मे चकत्ते मुरझा जाते है और रोगो ठीक हो जाता है। रोग भयकर होने पर २-३ सप्ताह तक चलता है।

बचने के उपाय — (१) रोग-ग्रस्त रोगी से स्वस्थ वच्चो को दूर रखे।

(२) गला साफ रखे और ठण्ड से वचे।

चिकित्सा — (१) रोगी को गरम कपड़े ओढ़ने और बिछाने के लिए देवे

(२) गरम तरल चीजे रोग के प्रारम्भ मे दे, इससे दाने व चकत्ते जल्दी निकल आते है ।

(३) बडी माता के समान चिकित्सा करे ।

●

विषम ज्वर (मलेरिया)

(प्राय: यह बुखार ठण्ड लगकर चढ़ता है, अत "शीत-ज्वर" भी कहलाता है ।)

पहिचान — जो बुखार अनियमित समय में हो, कभी सरदी के साथ और कभी गरमी के साथ हो, कभी अधिक और कभी कम हो, उसे 'विषम-ज्वर' कहते है । इसके पाच भेद हैं :—

(१) सन्तत-ज्वर — यह लगातार सात दिन, दस दिन या बारह दिन बना रहता है ।

(२) सतत-ज्वर .— यह बुखार सुबह चढकर शाम को उतर जाता है और रात को चढकर सुबह उतर जाता है अर्थात् दिन रात मे दो बार चढता और उतर जाता है ।

(३) तृतीयक (तिजारा) —यह दो दिन छोडकर तीसरे दिन फिर चढता है ।

(४) अन्येद्यु(एकांतरा)·-यह एक दिन छोडकर चढता है ।

(५) चतुर्थक [चौथिया] यह तीन दिन छोडकर चौथे दिन फिर चढता है ।

आजकल कहा जाने वाला 'मलेरिया' बुखार भी एक प्रकार का विषम–ज्वर ही है । जो मलेरिया के खास जीवाणुओ के कारण होता है । यह जीवाणु 'मलेरिया पराश्रयी' कहलाते है । इनका शरीर मे प्रवेश एनोफिलीज नामक खास प्रकार के मादा मच्छरो के काटने से होता है ।

मलेरिया मे सिर दर्द होना, जी मिचलाना, उल्टी होना, सर्दी लगकर और कपकपी होकर तेज बुखार चढना, बुखार उतरने के समय पसीना आना—ये मुख्य लक्षण होते हैं । बुखार का बारबार आना इसकी विशेषता है । बारबार बुखार आने के कारण खून की कमी

और कमजोरी हो जाती है और यकृत तथा तिल्ली बढ़ जाते है । ऐलो-पेथी मे 'कुनीन' इसकी सबसे उत्तम दवा है ।

बचने के उपाय — [१] मच्छरो का नाश करे । सीलन वाले स्थानो को खुश्क कर दे ।

[२] रहने के स्थान में गुगल, राई, नीम के पत्ते, अगर और राल का धूप देवे ।

[३] शरीर पर सोने से पहले सरसो का तेल लगावे ।

चिकित्सा — [१] दारू हल्दी २ तोला को कुचल कर १६ गुने जल मे उबालकर ८वा हिस्सा शेष रहने पर छानकर पिलावे ।

काली-मिर्च को तुलसी के पत्तो के रस की सात बार भावना देवे और मटर के बराबर गोलिया बना ले । १-१ गोली गरम पानी के साथ बुखार आने से ४ घण्टे पहले १-१ घन्टे के अन्दर से देवे अथवा ११ तुलसी के पत्ते और ११ काली मिर्च बुखार चढकर उतरने पर देवे ।

[३] त्रिफला के क्वाथ मे गुड मिलाकर पीवे ।

[४] कुछ भुने हुए स्याह जीरे का चूर्ण ३ माशा गुड १/२ तो० मिलाकर सुबह-शाम गरम पानी से लेवे ।

[५] फुलाई हुई फिटकडी का चूर्ण ५ रत्ती मिश्री १ माशा मिलाकर बुखार आने से पहले ३-४ बार देने से बुखार नही चढता ।

[६] हरड का चूर्ण ६ माशा—१ तोला शहद से चटावे । ●

काला अजार, काल-ज्वर, लाधरक ज्वर ।

पहिचान—यह आसाम, बंगाल, बिहार, उड़ीसा और उत्तर प्रदेश के पूर्वी भागों तथा मद्रास के कुछ भाग में मिलता है। यह एक प्रकार की मक्खी के काटने से उत्पन्न होता है।

इसमे अनियमित बुखार (दिन मे दो बार चढने और उतरने वाला), खून की कमी, यकृत और प्लीहा का बढ जाना, खून बहने की प्रवृत्ति, त्वचा मे कालापन, पेट की सिराओं का फूलकर टेढा हो जाना, दुर्बलता और कृशता, लम्बी हड्डियो मे पीडा—ये लक्षण होते हैं। इसमे भूख ठीक लगती है और रोगी वर्षो तक रोग से पीडित रहने पर भी अपना काम करता रहता है।

बचाने के उपाय:—मक्खी से बचने के लिए घर मे अच्छी तरह से सफाई रखे। रात्रि मे सोने के लिए मसहरी का उपयोग करे। रहने के कमरे मे प्रकाश का अच्छा प्रबन्ध हो तथा सीलन न रहे, इसका उपाय करे। बदन पर सरसो का तेल लगावे तथा बिस्तर पर कपूर छिडके—इससे मक्खियां समीप नही आती।

चिकित्सा—(१) नीलांजन (१/२ रत्ती) की मात्रा मे, कालमेघ की पत्ती के रस या क्वाथ मे शहद मिलाकर देवे। यही इसकी सर्वोत्तम दवा है।

(२) छोटी पीपल का चूर्ण ४ रत्ती, शहद के साथ चाटे।

(३) बढे हुए यकृत् और प्लीहा पर सहिजन की छाल को गौ-मूत्र मे पीसकर गरम-गरम लेप करे।

(४) पिप्पली का चूर्ण ४ रत्ती से १ माशा, दूध मे उबालकर पीने को देवे।

लू लगना [अंशु घात, सन स्ट्रोक]

पहिचान —गरमी के दिनो मे जब वायु मे नमी अधिक होती है और पसीना सूख नही पाता, तब शरीर का ताप बढ जाने से, यह बीमारी पैदा हो जाती है कम पानी पीना और बन्द हवा के स्थान मे देर तक काम करने से यह दशा शीघ्र पैदा होती है।

यह रोग अचानक प्रारम्भहोता है । तेज बुखार होकर बेहोशी हो जाती है । इसको दो अवस्थाए मिलती है —

साधारण दशा —अधिक समय तक गर्म स्थान में रहने से यह दशा पैदा होती है । बुखार १०२–१०३ डि०, वमन, चक्कर, सिर मे दर्द, अजीर्ण, कब्ज, यकृत की वृद्धि, कमजोरी, नाडी की तेज गति, प्यास, पसीना नही आना, बैचेनी आदि लक्षण होते है।

(२) **तीव्र दशा** — इस दशा को ही 'लू लगना' कहते है । अकस्मात तेज बुखार (१०८-११२ डि०फा०) चढकर बेहोशी हो जाती है । आक्षेप (हाथ पैर मे झटके आना,) बकझक करना और पेशियो का कडा होना, चेहरा व आखो का लाल होना, पसीना न आना ये लक्षण पैदा हाते है । यदि ठीक से और समय पर चिकित्सा नही हो पायी तो नाडी की क्षीणता होकर सास घुटकर मृत्यु हो जाती है ।

(१) **बचने के उपाय** — तेज गर्मी मे बाहर नही निकले । (२) पानी पर्याप्त मात्रा मे पीये (३) गर्मी मे बन्द स्थानो पर अधिक समय तक काम नही करे । (४) गर्मीयो मे प्याज, इमली और कच्चे आम के पन्ने का पीना हितकर होता है ।

(१) **चिकित्सा** — बीमारी के कपडे उतारकर, पखे की हवा दे और ठण्डक पहुचावे । सिर पर बर्फ की थैली या पानी की (ठन्डे पानी की) पट्टिया रखे । रोगी पर बर्फ के ठन्डे पानी मे, चद्दर निचोडकर ओढावे । ऐसा तब तक करते रहे जब तक बुखार १०२ डि० फा० तक न आ जाय ।

(२) चन्दन जल मे घिसकर पिलावे ।

(३) कच्चे आम को बफाकर उसका पना बनाकर पिलावे ।

(४) प्याज का रस निकालकर शरीर पर मले ।

(५) इमली को गर्म राख मे भूनकर, उसके गूदे को जल मे घोलकर शक्कर मिलाकर पिलावे ।

अध्याय-५

पेट की बीमारियां

अग्निमांद्य और अजीर्ण
भूख न लगना और बदहजमी

पहिचान — खाये पीये पदार्थो को पचाने और उसका रस बनाने का काम पेट की अग्नि करती है। किन्तु वद परहेजी से वह अग्नि विकृत हो जाती है तव (१) अग्नि मद होना, (२) अग्नि तेज होना और (३) अग्नि विषम होना, यह तीन विकार पैदा होते हैं। अग्नि मद होने पर खाया पीया ठीक से पचता नही है और तव आम अजीर्ण हो जाता है। इसमे खाया पीया न पचना, कच्चे डकार आना, मु ह मे पानी भरना, भूख नही लगना, खाने मे रूचि न होना, उवकाई आना और अन्य कफ के लक्षण पैदा होते है। इसमे कफ की अधिकता होती है।

तेज अग्नि पित्त से होती है। इसमे 'विदग्धाजीर्ण' हो जाता है विदग्धाजीर्ण मे रोगी जितना भी खाता है, पचा लेता है बल्कि यो कहना चाहिए कि इसका खाया पीया जल जाता है जैसे तेज आँच पर रोटी सेकने से रोटो पकने के बजाय जल जाती है। इसी प्रकार इसमे भी खाया पीया भोजन क्रम से पकता नही है। इसमे रोगी को खट्टे जले डकार आते है, शरीर में जलन होती है। रस ठीक नही बनता और शरीर मे बल नही आता है तथा पित्त के अन्य लक्षण होते है।

विषमाग्नि वायु से होती है। इसमे विष्टब्ध अजीर्ण हो जाता है इस अजीर्ण मे कभी भूख लगती है कभी नही लगती। कब्ज रहती है शरीर रूखा और तेज रहित हो जाता है। वायु के अन्य विकार होते है।

इस प्रकार अग्नि की यह तीनो विकृतियां (मन्दता, तीक्ष्णता, विषमता.) को प्राचीन वैद्यो ने अग्निमाद्य शब्द से कहा है शरीर में होने वाले प्राय सब शरीरिक या निज रोगो का मुख्य हेतु (विशेषकर पेट सम्बन्धि रोगो का) अग्निमाद्य ही होता है।

चिकित्सा —(१) भोजन से पहले अदरक की चटनी मे नमक, नीम्बू, का रस और भूना जीरा मिलाकर खाने से खूब भूख लगती है।

(२) काला नमक, सोठ, हरड, छोटी पीपल और निशौथ को वरावर लेकर कपड-छान चूर्ण वनाकर रख ले। ६ माशा गरम पानी के साथ लेवे, इसे 'पन्चसम' चूर्ण कहते है। इसके सेवन से शूल, ववासीर अफारा, मंदाग्नि और अजीर्ण रोग दूर होते हैं।

(३) हरड, पीपल और सेंधा नमक का चूर्ण वनाकर ३ माशा गरम जल से खाने से अजीर्ण दूर होता है।

(४) सोठ, पीपल, पीपलामूल, चव, चित्रक की जड़ की छाल, इनका चूर्ण वनाकर ३ से ४ माशे मात्रा में गरम पानी के साथ लेना चाहिए। इससे वायु गोला, मदाग्नि, कफ, अरूचि और मग्रहणी आदि रोग नष्ट हाते है। यह चूर्ण अच्छा दीपन और पाचन है।

(५) हरड, वहेडा, आवला, चव और पीपल इन पाचो को समान भाग मे लेकर ३ से ४ माशा की मात्रा लेकर शहद मे चाटे इससे ज्वर श्वास, कास, और मदाग्नि दूर होती है।

(६) **हिंग्वष्टक चूर्ण**.— सोठ, कालीमिर्च पीपल, सेंधानमक, स्याह जीरा सफेद जीरा, अजमोद-प्रत्येक १-१ भाग घी में भूनी हुई हीग आठवा भाग। सवका महीन चूर्ण कर मिलाले। ३ माशा की मात्रा मे भोजन के समय पहले ग्रास मे घी के साथ मिलाकर सेवन करे पेट की वायु, डकारे आना, अजीर्ण, मदाग्नि आदि रोग शान्त होते है।

अरुचि (भोजन करने की इच्छा न होना)

पहिचान :—बहुत खाने से, भारी पदार्थ खाने से, भोजन के ऊपर भोजन करने से, नरम-खख्त, समय-कुसमय मे भोजन करने से 'अरुचि' रोग हो जाता है ।

इसमे स्वादिष्ट भोजन भी मुह मे रखने से अच्छा नही लगता, इसे 'अरुचि' या 'अरोचक' कहते है ।

जब मन से सोचकर, देखकर और सुनकर ही भोजन की इच्छा नही होती तो उसे 'भक्त द्वेष' (खाने से द्वेष) रोग कहते है ।

लक्षण —शरीर मे जलन होती है, शरीर सूखता है, प्यास लगती है, खाने में बिल्कुल रुचि नही होती, शरीर में पीडा होती है, हृदय मे भी पीडा होती है । ये अरुचि के लक्षण है ।

चिकित्सा —(१) सोठ, काली मिर्च, पीपल हरड, बहेडा, आँवला और हल्दी का चूर्ण ३ माशे लेकर शहद के साथ सात दिन तक चाटे । इससे अजीर्ण और अरुचि दूर होते है ।

(२) पीपल १०० नग, काली मिर्च १०० नग और मिश्री ४ तो० मिलाकर चूर्ण बनाकर रखले । २–३ माशे प्रतिदिन सुबह खावे ।

(३) अदरख का रस ३ माशा, नीबू का रस ३ माशा, सेधा नमक १ माशा मिलाकर पीवे ।

(४) नीबू को, केशर को, थोडा सेधा नमक और कालीमिर्च के साथ मिलाकर मुँह मे चलाते हुए खावे ।

●

कै होना, उल्टी होना (वोमिटिंग)

पहिचान — अति चिकने, पतले, अति नमकीन पदार्थ खाने से, बहुत भोजन करने से, बेवक्त भोजन करने से, भय से, थकावट से, घबराहट से, पेट में क्रिमि पड़ने से, अजीर्ण से, गंदी और बदबूदार वस्तुओं को देखने से और सूंघने से, स्त्रियों में गर्भ धारणा हो जाने से, घृणा और नफरत पैदा करने वाले पदार्थ देखने से, खाने से सूंघने से, आमाशय में उभड़ा हुआ दोष ऊपर आकर मुंह को भरता हुआ और अंगों को पीड़ा पहुँचाता हुआ, खाए हुए अन्नादि को निकालता है, उसे 'उल्टी' या 'छर्दि' कहते हैं।

चिकित्सा — (१) १ तोला घृत के साथ १ माशा सेंधा नमक मिलाकर थोड़ा-थोड़ा चबाये।

(२) जीरा, खांड, सेंधा नमक, काली मिर्च—सबको बराबर लेकर चूर्ण बनावे। ६ माशे मात्रा में जल के साथ खावे।

(३) गिलोय का काढ़ा बनाकर शहद मिलाकर पीवें।

(४) पीपल वृक्ष की छाल को जलाकर राख करले, फिर पानी में घोलकर नितरने रख दे, फिर नितरा हुआ पानी रोगी को पीने को दें।

(५) आंवला १ तोला, मुनक्का १ तोला, दोनों को ८ तोला पानी में, पीस छानकर उसमें २ तोला मिश्री और १ तोला शहद मिलाकर पीने को दे। इसे घूंट-घूंट कई बार पीवें।

(६) पित्त-पापड़े का क्वाथ बनाकर उसमें १ तोला शहद मिलाकर कई बार पीये।

दस्तें लगना (अतिसार, डायरिया)

पहिचान — पेट की अग्नि मंद होने पर अनेक प्रकार की बीमारिया हो जाती है। उनमे 'दस्ते लगना' सबसे मुख्य है। अग्निमांद्य के कारण पेट मे बढा हुआ जलीय धातु मल (टट्टी) के साथ मिलकर, अपान वायु से ढकेला जाकर गुदामार्ग से बार-बार बाहर निकलता है। अधिक मात्रा मे और बार-बार द्रव मिश्रित [पतले] मल का निकलना 'अतिसार' कहलाता है। बोलचाल में इसे 'दस्ते लगना' कहते है।

बहुत भारी, चिकनी और रूखी वस्तुओ को अधिक खाने से, बहुत अधिक भोजन करने से, शराब पीने से, गदा पानी पीने से, बहुत देर तक पानी मे नहाने से, तैरने से, मौसम बदलने से, टट्टी और पेशाब को हाजत को रोकने से, पेट मे क्रिमि हो जाने से, बद-परहेजी से, विष के जाने से, भय से, शोक से, यह रोग [अतिसार] पैदा होती है। [अतिसार बार-बार पतली दस्त आना]।

चिकित्सा — अतिसार की चिकित्सा में सबसे पहले इस बात का पता लगाना चाहिए कि जो दस्त आ रहे है उनमें कच्चा [आम] मल निकल रहा है अथवा पका हुआ। यदि कच्चा मल निकल रहा हो तो लघन करावे और उसे पकाने के लिए दवा देनी चाहिए तथा यदि पका हुआ मल निकल रहा हो तो उसे रोकने की दवा देनी चाहिए। कच्चे मल को पहले ही रोकने की दवा देने से आफरा, गुल्म, सूजन आदि रोग पैदा हो जाते है। थोडी-थोडी मात्रा में रुक-रुककर और पीडा के साथ दस्त हो रहे हो तो हरड का चूर्ण ३ माशा और पीपल का चूर्ण १ माशा मिलाकर दिन में ३-४ बार गरम पानी से ले।

आम और पक्व मल की पहिचान —

दस्त मे कच्चा या पका मल जा रहा है, इसकी पहिचान इस प्रकार है। कच्चा मल पानी मे डूब जाता है दुर्गन्धियुक्त, छिछडेदार होता है, पीडा (दर्द या ऐठन) के साथ निकलता है, एकएक कर या

कब्ज होकर निकलता है, शरीर में भीरपन जकडाहट पेट में गुडगुडाहट आफरा, मुह मे पानी आना आदि लक्षण होते हैं। इनसे विपरित लक्षण हो तो पका हुआ मल समझना चाहिए। नीचे कुछ सामान्य योग देते है, जो दोनों प्रकार दशाओ में काम आते है।

(१) उबाला हुआ जल पीने को दें। रोटी आदि खाने को न दें। खिचड़ी, दही, चावल या केवल छाछ पिलावे। (भूना जीरा व नमक मिलाकर)।

(२) धनिया, सोठ, नागरमोथा,सुगन्ध वाला खस और कच्चे बेल की गिरी, समान मात्रा मे लेकर जौ कूट कर लेवे। इसमें से १-२ तोला लेकर ८ गुने जल मे उबाले शेष चौथाई रहने पर छानकर पिलावे (शास्त्र में इसे "धान्यपंचक क्वाथ" कहते हैं। अतिसार की उत्तम दवा है - पैतिक और रक्तज अतिसार में सोठ को छोडकर केवल चार चीजों का क्वाथ बना कर देवें।

(३) पक्व मल वाले अतिसार मे — कुडे की छाल का चूर्ण ३ से ६ माशा की मात्रा मे दही से चटावे,

(४) अतीस का चूर्ण ३ माशा शहद से चटावे।

(५) सोठ और जायफल को प्रत्येक(१ से ३ मा० की मात्रा में) पानी के साथ स्वच्छ पत्थर पर घिसकर चटावे।

(६) दस्त में खून जा रहा हो तो नागकेशर का चूर्ण ३ मा०, जल के साथ देवे।

(७) अतिसार के साथ सूजन भी हो तो नमक बन्द कर दे।

पेचिश, प्रवाहिका डिसेन्टरी

पहिचान — जब दस्त में बहुत जोर करने पर भी थोडा-थोडा मल अथवा आव (आम) युक्त मल निकले, पेट में ऐंठन के साथ बहुत बार दस्त जाना पडता है, उसे 'पेचिश' या प्रवाहिका कहते है यह दो प्रकार की होती है एक जिसमें मल के साथ आँव बहुत जाती है दूसरी, जिसमें आव के साथ खून भी गिरता है।

चिकित्सा —रोगी को रोटी आदि भारी चीज खाने को नही दे। केवल चावल खिचडी दही छाछ पर रखें।

(२) यदि रोगी को पेट में भारीपन, रह रहकर दर्द, होता हो तथता दस्त बहुत कम और ऐंठन अधिक हो तो समझना चाहिए आव अधिक जमा हुआ है और आतो मे चिपका हुआ है। उसके सुद्दे जम गए है। ऐसी दशा में प्रात काल रोगी के वय और बल को ध्यान मे रख कर १/२ से २ तो० एरण्ड का तेल को गरम दूध या गरम पानी मे फेटकर (हिला मिलाकर) पिलावे। इससे बहुत सा आव निकल जाता है और शेष आव को पाचक औषधि देकर ठीक कर सकते है।

(३) यदि दुर्बल और सुकुमार हो तो ईसबगोल की भूसी ३-६ माशा पानी में भिगोकर फुलाकर फिर पानी के साथ देवे। बिना भिगोये भी दे सकते है इससे आव निकलने में मदद मिलती है।

(४) आम के सुद्दे निकल जाने पर भूनी हुई सौफ और कच्ची सोफ बराबर लेकर उसमें दोनो के बराबर शक्कर मिलाकर चूर्ण बना लेवे। ३-४ माशा उबले हुए जल के साथ, दिन मे ३-४ बार देवे।

(५) बेल की गिरी, सोठ, छोटी पीपल, समान भाग लेकर चूर्ण बनावे। ३ माशा चूर्ण जल के साथ देवे।

(६) कूडे की छाल के काढे में शहद मिलाकर पीने से खून के दस्त ठीक हो जाते है।

(७) पुरानी पेशिच मे पके हुए बेल के फल का शर्बत बहुत लाभ करता है।

(८) कूडा की छाल या इन्द्रजौ अतीस, बेलगिरी, नेत्र बाला और नागरमोथा- पूनको समभाग लेकर काढ़ा बनाकर पीने से आंव, पेट का दर्द और दस्ते ठीक होते है।

ग्रहणी और संग्रहणी

पहिचान :— अतिसार रोग के मिट जाने के वाद [अ]ग्नि मन्द रहने पर यदि मनुष्य कडवे, कपैले, चरपरे, ठण्डे, अति रूखे और चिकने (तलेपदार्थ) पदार्थो का सेवन करता है अथवा मात्रा से अधिक भोजन करता है, तो उसकी पाचन शक्ति दुर्वल होकर, आहार को पचाने और शोपरग करने वाली ग्रहणी कला खराव हो जाती है। विना अतिसार हुए भी व्यक्ति लगातार वद-परहेजी करता है, तो अग्नि दुर्वल होकर ग्रहणीकला खराव हो जाती है।

इस रोग मे खाये–पीये पदार्थो अक्सर कच्चे ही मल के रास्ते निकल जाते है और कभी–कभी पका हुआ मल (वंधा हुआ) पीडा के साथ बाहर निकलता है। दिन मे कई वार दस्त होते हे। पेट में गुडगुडाहट, जलन, कच्चे पक्के डकार आते है, शरीर में आलस्य रहता है, वल और क्षीरग हो जाता है। प्यास लगती है और खाया–पीया बडी देर से पचता है।

सग्रहणी में कभी पतला कभी गाढा, ठण्डा चिकना, आम मिला [ह]ुआ, लेसदार, वहुत अविक मात्रा मे और आवाज और दर्द के साथ [नि]कलता है। पेट मे गुडगुडाहट, कमर मे दर्द होता है हाथ पाव में [स]ूजन आती है। आलस्य रहता है और शरीर ढीला पड जाता है। [द]स दिन, पन्द्रह दिन और महिने भर वाद रोग फिर हो जाता है। इसी [प्र]कार वार-वार होता रहता है और चिरकाल तक पीछा नही छोडता है। उसे सग्रहणी (संग्रह–ग्रहणी) कहते है। यह रोग कष्टसाध्य है और इसमे आम और वायु की प्रधानता रहती है। इसकी चिकित्सा भी कठिन है। क्योकि दस या पन्द्रह दिन बाद होने के कारण रोगी जान नही पाता कि उसे कोई बीमारी है। भोजन के बाद दस्त होना, खून की कमी, मुंह में छाले होना, कमर–दर्द, शरीर में रूखापन और कमजोरी इस रोग के खास परिणाम हे।

चिकित्सा–विशेष —ग्रहणी रोग में अजीर्ण के समान चिकित्सा की जाती है और अतिसार के समान ही मल के आम और पक्व होने का निर्णय किया जाता है। आम मल होने पर

लंघन और दीपन-पाचन औषधि दी जाती है। पक्वा मल होने पर दस्त रोकने वाली दवा दी जाती है।

(१) रोटी आदि कठिन पदार्थ खाने को न दें। चावल, खिचडी, दूध, फलो का रस और छाछ, दही देना चाहिए।

ग्रहणी-रोग में छाछ का सेवन बहुत हितकर है।

(२) छोटी पीपल, काली मिर्च, सोंठ, हीग, काला व श्वेत जीरा, सेधा नमक, अजवाइन इनका चूर्ण बनाकर १ से ३ माशा गरम पानी से देवे।

(३) सोठ, अतीस, नागरमोथा, का काढ़ा पिलावे।

(४) बेलगिरि का चूर्ण एक माशा, सोंठ का चूर्ण १ माशा और गुड दो माशा मिलाकर भोजन के बाद जल के साथ दे दे।

हैजा : विसूचिका-कोलेरा

पहिचान — यह रोग खाने पीने की गडबडी और पेट की खराबी से होता है। इसमें बहुत अधिक दस्ते लगना (पतली पानी जैसी), उल्टी होना, पेट में दर्द-ऐंठन, कम्पन, चक्कर आना, बेहोशी, जलन होना, प्यास लगना और जभाई आना, शरीर का तेज नष्ट होना, सिर और हृदय प्रदेश मे वेदना होना आदि लक्षण होते है। रोग बढ जाने पर नीद नही आती, बेचैनी रहती है, पेशाब रुक जाता है, तेज कम्पकपी होती है, और बेहोशी हो जाती है। दात ओठ, और नख नोले पड जाते है। आखें भीतर धस जाती है, जोड ढीले पड जाते है और स्वर मद पड जाता है। कभी-कभी यह रोग मारक के रूप मे फैलता है। और तीव्र सक्रामक है।

बचने के उपाय— कच्चे, सडे-गले खाद्य पदार्थ और फल सब्जियो को न खावे। बाजार की मिठाई आदि न खावे। पानी उबालकर पीवे। रात का जागना, मादक चीजो का सेवन न करें। ताजे फलो व सब्जियो को उबले जल से धोकर काम मे लें। भोजन ताजा, हल्का और गरम गरे। अजीर्ण न होने दे।

रोगी का मल मूत्र और उल्टी को जमीन मे गढ्ढा खोदकर गाड देवे या जला देवे। कपडो को भो उबलते जल मे डाले।

चिकित्सा —रोगी को खाने को कुछ नही दे। पीने के लिए लौग डालकर उबाला हुआ पानी, सोफ का अर्क, पुदीने का अर्क, प्याज का रस (२ से ६ तोला तक) कपूर का जल (कपूर ५ तोला जल ३० सेर मिलाकर सात दिन रख, बाद मे छानकर काम में लेवे।

(२) कर्पूरधारा(देशी कपूर, पौदीने का सत्व और अजवायन का सत्व, तीनो बराबर लेकर एक मे मिलाकर रख ले) २-२ बूंद शक्कर या पताशे मे डालकर खिलावे। इससे दस्ते, उल्टी और पेट का दर्द बन्द होता है।

(३) पेशाब रुक गया हो तो कलमी शोरा को पानी में घोल कर लेवे। इसमे वस्त्र भिगो कर पेडू पर रखना चाहिए।

(४) लहसुन, जीरा, सेधा नमक, गवक, सोंठ, काली मिर्च, पीपल और भूना हुई हीग-इन आठ चीजो को समान भाग में लेकर नीवू के रस के साथ घोटकर चने के बराबर गोलियां बना ले। २-५ गोली, एक बार मे दिन में २-३ बार जल के साथ देवे। (वैद्यजीवन नामक ग्रन्थ मे यह योग 'लशुनादिवटी' नाम से दी हुई है।)

(५) काला नमक, हरड़, पीपल का चूर्ण ३ माशा, गरम जल से देवे।

शूल रोग (पेट का दर्द)

पहिचान :— तेज चुभन जैसी वेदना को 'शूल' कहते हैं। खासतौर से पेट और छाती मे होने वाले इस प्रकार के दर्द 'शूल' के नाम से जाने जाते है।

शूल का मुख्य कारण वायु होता है।

चिकित्सा :— (१) सभी प्रकार के शूल में गर्म जल की वोतल या रवर की थैली से सेकना अथवा गर्म पानी में तारपीन का तेल डालकर उसमें तौलिया भिगोकर उदर पर सेंकना चाहिए।

(२) दशमूल के काढे मे एरण्ड का तेल, हीग और काला नमक मिलाकर पिलावें।

(३) एरण्ड की जड की छाल २ तोला और सोठ १/२ तोला लेकर, उसका काढा वनावें। उसमें हीग १/२ रत्ती और काला नमक ४ रत्ती मिलाकर पिलावे। इसमें पेट का दर्द ठीक होता है।

(४) शूल के रोगी को परिश्रम, दालो का सेवन, शराब पीना, मिर्च मसाले और तले पदार्थ छोड देना चाहिए। कब्ज हो तो जुलाव लेवें। इसके लिए एरण्ड का तेल १ से २ तोला गर्म जल या गर्म दूध में मिलाकर पीवें।

●

परिणाम शूल और अन्नद्रव शूल
(गैस्ट्रिक एण्ड ड्यूडोनल अल्सर)

पहिचान —ये दोनो पैत्तिक शूल हैं। भोजन के पचने के समय या पच जाने पर (अर्थात् भोजन के २-३ घण्टे बाद) यदि उदर मे शूल से (दर्द) होता है तो उसे—"परिणाम शूल" (भोजन के परिपाक काल मे होने वाला दर्द) कहते हैं। इसमें भोजन करने से कुछ आराम मिलता है। भोजन करने के तुरन्त बाद या भोजन के पच जाने पर या खाली पेट रहने पर या आमाशय भरा रहने पर भी कभी पेट में दर्द होता है तो उसे "अन्न द्रव शूल" कहते हैं। इसी भोजन करने या नही करने से निश्चित रूप से कोई लाभ नही होता। परन्तु उल्टी होने पर आराम मालूम होता है।

चिकित्सा.— (१) रोगी को दूध पर रखें। रोटी, दाल और नमकीन, चरपरे पदार्थ खाने को न दे। अनार का रस और आवले का सेवन खूब करावे।

(२) शख भस्म या कौडी की भस्म (४ रत्ती से १ माशा) दूध के साथ, दिन में दो बार दें।

(३) नारियल का जल पिलावे।

(४) कब्ज हो तो—हरड़, मुनक्का और अमलताश का काढा पिलावें।

(५) आंवला, मुलेठी, शतावरी और मिश्री-का चूर्ण ३-६ माशा दूध के साथ दे।

(६) मीठा सोढा (३–६ माशा) पानी में घोलकर पिलाने से दर्द मे शान्ति मिलती है।

अम्लपित्त-हाइपर एसिडिटी
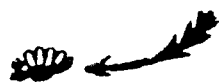
परिचान:— दूध मछली आदि विरूद्ध भोजन और जल पीने से, अधिक खट्टे, जलन करने वाले और पित्त को प्रकुपित करने वाले अन्नपान सेवन करने से तथा अन्य कारणो से कुपित होकर पित्त विदग्ध अर्थात खट्टा हो जाता है, इससे होने वाला रोग 'अम्ल-पित्त' कहलाता है।

भोजन का न पचना, विना काम किये थकावट, उबकाईयां कडुवे और खट्टे डकार, शरीर भारी होना, हृदय (नाभि से ऊपर पेट का भाग) और कण्ठ में जलन होना, अरुचि-ये अम्लपित्त के लक्षण हैं।

अम्लपित्त में कोष्ठ मे पित्त का सचय वढ जाता है। और वह पित्त खट्टा होता है। अत जलन और खट्टी डकारें आती है।

(१) **चिकित्सा:**—खट्टी तली हुई, मिर्च मसाले दाले, बेसन, चावल और भारी चीजे न खाये। भोजन के वाद कुछ विश्राम करे। दूध का अधिक सेवन करे।

(२) आँवले के रस १ तोला में मिश्री १ तोला मिलाकर पीवें। अथवा आवले का चूर्ण ६ माशा मिश्री या शहद मिलाकर खावें। दूध पीवें।

(३) मुलेठी का चूर्ण ६ माशा शहद के साथ चाटे।

(४) चिरायता और मुलेठी को पानी में पीसकर खाँड मिलाकर पीने से अम्लपित्त दूर होता है।

(५) सफेद सर्जिकाखार (मीठा सोडा) ३ माशे १ छटांक जल में घोल ले और उसमे नीबू का रस निचोड लेवे। इसमें झाग उठेगें इसे दोपहर के भोजन के वाद २-३ वजे दिन मे एक बार पीना चाहिए।

वायु-गोला, बायगोला, गुल्म

पहिचान :— पेट में होने वाले और उभरकर गाठ जैसा लगने वाले उभार को 'गुल्म' या 'वायगोला' कहते है। हृदय और नाभी के बीच में, इधर उधर चलने वाली अथवा स्थिर रहने वाली. आकार में गोल, घटने-बढने वाली, जो गाठ होती है, उसे गुल्य रोग कहते हैं।

दोनो पसवाडे, हृदय प्रवेश (पेट का बीच का नाभि से ऊपर का हिस्सा), नाभि (पेट का बीच का हिस्सा), वस्ति (पेट का नीचे का हिस्सा) ये गुलम के पैदा होने के ५ स्थान है, अर्थात् गुल्म इन्ही पाच स्थानो में होता है।

चिकित्सा :— (१) खाने में उडद, तली हुई चीजे, आलू, बेसन, दाले, चावल और भारी पदार्थों का सेंवन न करे।

(२) एरण्ड का तेल २ तोला गरम दूध में मिलाकर पीवें।

(३) त्रिफला चूर्ण ६ माशा और मिश्री ६ माशा, शहद में मे मिलाकर खावे।

(४) अजवायन ६ माशा, काला नमक दो माशे—इनका चूर्ण छाल के साथ मिलाकर पीवे।

(५) सोठ और पीपल का चूर्ण शहद में मिलाकर चाटे।

(६) हिंग्वाष्टिक चूर्ण, हरड का चूर्ण और सुज्जीखार (मीठा सोढा) मिलाकर ४-६ माशे मात्रा मे गुनगुने जल से खावे।

बवासीर (अर्श), पाईल्स

पहिचान — यह गुदा का रोग है। अग्नि मंद होने से अतिसार-ग्रहणी के बाद, कब्ज अधिक रहने से, और बैठक का काम करने से गुदा की शिराएँ फूल आती है। जिससे मास के अकुरो के के समान उभार बन जाते हे। उन्हे 'बवासीर' या 'मस्से' कहते है।

यह दो प्रकार के होते हैं। (१) सूखे और (२) गीले (इनसे रक्त बहता है) इसीलिए उनको 'खूनी बवासीर' भी कहते हैं।

चिकित्सा.— बवासीर की चिकित्सा ४ प्रकार से की जाती है।

(१) दवा के द्वारा (खाने के लिए और बवासोर पर लगाने के लिए दवा का इस्तेमाल कहते हे।)

(२) शस्त्र-चिकित्सा या चीरा-फाडी [(बवासीर को काटकर अलग कर देते हैं।)

(३) क्षार का प्रयोग (खाने और लगाने के लिए क्षार का प्रयोग करते हे।)

(४) अग्निकर्म या डाम्भना-सलाई आदि गरम करके मस्सो को जला देना।

(१) **सूखे बवासीर के लिए** हरड चूर्ण ३ माशा गरम जल से दिन में दो बार सुबह-शाम देवे।

(२) काली मिर्च १ भाग, सोठ २ भाग, चित्रक की जड की छाल ८ भाग, जमीकद (सूरण), १६ भाग, पुराना गुड सबसे दुगुना, इन सब औषधि की चीजो का कपडछन चूर्ण करके गुड मे मिलाकर २-२ माशे की गोली बनाले। प्रतिदिन २ या ३ गोली जल या दूध के साथ लेवे। इससे वायु गोला, अफारा, बवासीर, मन्दाग्नि आदि रोग दूर होते हे।

(३) बवासीर मे दर्द अधिक हो रहा हो भाँग की पत्ती को पीसकर, सेंककर टिकिया बनाकर गरम-गरम मस्सो पर बाधे।

खूनी ववासीर में—(१) २ तोले काले तिल और २ तोले मक्खन मिलाकर प्रतिदिन प्रात. खावे।

(२) नाग केशर ३ माशा, मक्खन २ तोले और मिश्री ६ माशा मिलाकर दिन में दो वार खावे।

सामान्य.— ववासीर का खास कारण अग्निमद होना है। इसीलिए इसमे अग्नि को वढाने वाले तथा वायु को अनुलोमन (नीचे की ओर गति) करने वाले अन्न-पान और औषध हमेशा करना चाहिए। **परहेज की दृष्टि से छाछ का सेवन (भूना हुआ जीरा मिलाकर) अत्यन्त हितकर होता है।**

●●

क्रिमिरोग

पहिचान — क्रिमि या कीडे दो प्रकार के होते हैं – वाहरी और भीतरी । वाहरी कीडे चमडी पर जूं, लीखो के रूप होते है । त्वचा की स्वच्छता रखने से वाहरी कीडे नही हो पाते । भीतरी कीड़े आमाशय, आँतो, गुदा मे पाये जाते हे ।

मीठे खट्टे, पतले, उडद, नमक, पीठीवाले पदार्थ और गुड अधिक खाने से, दिन मे सोने से, मास, मछली, दूध, दही, सिरका, काजी का अधिक सेवन, करने से, विरोधी पदार्थ (जैसे–दूध और मछली, दूध और मास, दूध और खटाई, दूध और उडद, दूध और मूली इकट्ठी खाने को 'विरुद्ध आहार' कहते है, इनको नही खाना चाहिए) अजीर्ण (वदहजमी) रहने से, पेट मे कीडे पैदा हो जाते है । इसे "क्रिमिरोग" कहते हे ।

क्रिमिरोग होने पर अग्नि मद पड जाती है, चक्कर आते है, बुखार और दस्ते लगती हे, चेहरे का रंग पीला पड जाता है, हृदय मे पीडा होती है, भोजन की इच्छा नही होती, वदन टूटता-सा मालूम होता है पेट मे दर्द होता है, गुदा से खाज होती है, मुंह मे वार-वार पानी भर आता है, कलेजे में खालीपन मालूम होता है और कुछ खा लेने पर शान्ति मिलती हे । ये क्रिमिरोग के लक्षण है ।

चिकित्सा — (१) रोगी को मीठा दलिया खिला कर जुलाव देना चाहिए । इससे कीडे वाहर आ जाते है ।

(२) सुवह २ तोला गुड खिलावे । १५–२० मिनट वाद ही १ से ३ माशा खुरासानी अजवायन का चूर्ण वासी पानी के साथ खिलावे । गुड के कारण एकत्रित हुए कीडे मल के साथ वाहर निकल जाते हैं । (यह योग अ कुश-मुख क्रिमियो मे अधिक उपयोगी है) ।

[३] अजवायन का चूर्ण ३–६ माशा, सेधानमक १ माशा, मिलाकर खाली पेट खिलावे । इससे अजीर्ण, आमवात, शीतपित

[पित्ती उछलना] और क्रिमिरोग ठीक होते हैं। अजवायन का चूर्ण गुड़ के साथ भी खिलाने से क्रिमि दूर होते हैं।

(४) कमीला या कपीला १ से २ माशा, गुड़ के साथ मिलाकर खाली पेट, जल से खिलावें। वच्चो के गुदा के कीडो मे विशेष लाभप्रद है।

[५] २ तोला गुड खिलाकर १५ मिनट वाद कमीला (कपीला) और वायविडग का चूर्ण [मिलित ३-६ माशा] गर्म जल से देवे। यह वच्चो के सूत्र-क्रिमियो में अधिक लाभकारी है।

[६] प्याज का रस पिलाने से भी वच्चो के चुन्ने मर जाते है।

[७] पलाश [खाखरे] के वीज का चूर्ण २-३ माशे की मात्रा में, गुड के साथ मिलाकर से खिलावे। इससे गोल-कीड़ो में अच्छा लाभ होता है।

●

उदावर्त-आनाह-आध्मान

वायु की उल्टी गति होना-अफारा, पेट का फूलना

पहिचान :— टट्टी, पेशाव आदि के वेगो को रोकने से वायु की नीचे की ओर जाने वाली स्वाभाविक गति बदलकर उल्टी ऊपर की ओर हो जाती है । इसे 'उदावर्त' कहते है । यह रोग वायु की विपरीत गति के कारण होता है । अत इसमे पीडा या दर्द भी होता है ।

शास्त्र मे १३ प्रकार के उदावर्त गिनाये गये है, परन्तु व्यवहार मे टट्टी, पेशाव और अपान वायु (पाद) को रोकने से होने वाले उदावर्त अधिकतर मिलते है । इनसे पेट मे दर्द होता है, टट्टी का नियमित निकलना रुक जाता है, पेशाव रुक जाती है और डकारे अधिक आती है, भूख नही लगती, पेट मे भारीपन मालूम पडता है ।

आनाह-(कब्ज या बद्धकोष्ठ) — यह उदावर्त के कारण होने वाली अवस्था है । इसमे मल-मूत्र अपान वायु और डकार का निकलना, विल्कुल रुक जाता है, पेट में गुडगुड शब्द भी नही होता । यह (आव) और मल के रुकने से होता है । वास्तव मे आखो की गतिया रुक जाने से यह दशा पैदा होती है ।

आध्मान-(अफारा या पेट का फूलना) :- उसमे वायु रुक जाती है, पेट फूलता है,पेट मे दर्द होता है, गुडगुडाहट, तेज दर्द और तनाव पाया जाता है, 'आनाह' और 'आध्मान' में यह अन्तर है कि इसमे मल की रुकावट होना जरूरी नही है, साथ ही इससे पेट मे गुडगुडाहट और उदर मे तेज पीडा होती है ।

चिकित्सा :— (१) इन तीनो की चिकित्सा प्राय. समान है । वायु की गति को नीचे की ओर करने के लिए पेट पर तेल की मालिश और सेक करे तथा एनिमा लगावे ।

(२) निशोथ और हरड़ का चूर्ण, ३-६ माशा गरम जल से दें।

(३) घी में भूनी हुई हीग १ भाग, दूधिया नमक २ भाग कुठ ४ भाग, साजीखार (मीठा सोढा) ८ भाग, वायविडग १६ भाग, इनका कपडछान चूर्ण बनावे । ३-४ माशा गरम जल से देवे । (इसे 'हिंग्वादि चूर्ण' कहते है ।)

(४) निशोथ २ तोला, पीपल १ तोला, मिश्री ४ तोला लेकर कपडछान कर रख ले । इसमें १/२ से १ तोला शहद के साथ खावे । इससे आनाह, शूल, उदावर्त दूर होते हैं । (यह नाराच चूर्ण कहलाता है) ।

(५) भूनी हुई हीग ४ रत्ती और काला नमक १ माशा मिलाकर गरम पानी से खावे, इससे शूल, अफारा, उदावर्त दूर होता है ।

जलंधर-जलोदर

पहिचान—पेट की गुहा मे पानी भर जाने को 'जलोदर' कहते हैं। पेट धीरे-धीरे बढ़ना चालू हो जाता है। जैसे भरी हुई मशक थलकती है, वैसे ही पेट को अ गुलि से हिलाने पर पेट थलथल करता है और अंगुलियों से बजाने पर ध्वनि होती है। पेट चिकना और तन जाता है। नाभि उभर जाती है अर्थात् गहराई नही रहती। खून की कमी हो जाती है। हृदय कमजोर पड जाता है। हाथ, पाव, मु ह और पेट पर सूजन हो जाती हैं। भूख नही लगती। पेशाब कम उतरता है। श्वास चढने लगता है। कब्ज रहती है।

चिकित्सा.—(१) उदर रोग मे मल की अधिकता होती है। इसीलिए बार-बार जुलाब देते रहना चाहिए। इसके लिए एरण्ड का तेल त्रिफला के क्वाथ मे डालकर पीलावे या कुटकी का चूर्ण १ से ३ माशा पानी के साथ देवे। या निशोथ का चूर्ण ३ से ६ माशा या त्रिफला का चूर्ण ६ माशा गरम जल से प्रतिदिन देवे।

(२) रोगी को बिना जल, बिना नमक और बिना अन्न के रखते हुए केवल गाय का या बकरी का या ऊटनी का दूध देना चाहिए, जब तक कि पेट पहले जैसा नही हो जाय।

(३) एक बार जलोदर होने पर इसके ठीक होने पर पुन होने का डर रहता है। इसीलिए रोगी को अच्छे होने पर भी एक साल तक परहेज से रहना चाहिए।

(४) पुनर्नवा (साठी) की जड, नीम की छाल, परवल के पत्ते, कुटकी, सोठ, गिलोय, देवदारू और हरड इन द्रव्यो को सम भाग लेकर, २ तोले मात्रा को २० तोले जल में उबालकर चौथाई शेष रहने पर छानकर शहद मिलाकर पिलावे, इससे सारे शरीर की सूजन, जलोदर, पाडु रोग ठीक होते हैं।

(५) सहिजने की छाल को गोमूत्र मे पीसकर उदर रोग पर लेप करे।

●●

अध्याय-६

छाती की बिमारियां

तपेदिक यक्ष्मा (राजयक्ष्मा)
(ट्यूबर क्यूलोसीस)

पहिचान — शरीर को क्षीण करने वाले रोगो मे राजयक्ष्मा या क्षय सबसे भयकर रोग है। शरीर की धातुओ का बनने का कार्य क्षीण हो जाने से इसे 'क्षय' कहते है। इसमे रस रक्तादि धातु सूख जाती है इसिलए उसे शोष कहते है। हाथ पैर के तलुओ में जलन होती है। पसली और कधो में पीडा होती है। रक्त मिला हुआ कफ का वमन होता है बुखार बना रहता है स्वर बैठ जाता है क्षुद्र वास अर्थात थोडे परिश्रम से सास चलना, खासी, शिर में भारीपन, आखो में सफेदी माँस, खाने की इच्छा, मैथुन करने की प्रबल इच्छा होती है यह राजयक्ष्मा के लक्षण है छाती (फेफडे में घाव हो जाने पर हृदय मे पीडा, दुर्गन्धयुक्त और पूय युक्त कफ और रक्त का वमन होने लगता है। यह रोग अधिक मैथुन करने से, अधिक कसरत से तथा अनियमित भोजन करने से, मल-मूत्रवेगादि को रोकने से, ताकत से अधिक मेहनत करने से व्रण, शोक, ज्वर से और अधिक मार्ग चलने से होता है। राजयक्ष्मा को तपेदिक, राजरोग और महाजनी बुखार भी कहते है।

चिकित्सा — (१) राजयक्ष्मा के रोगी के मल एव वीर्य की रक्षा सदैव करनी चाहिए। क्योकि इन दोनो से बल बना रहता है। यदि कब्ज भी रहे तो अजीर मुनक्का दूध मे उबालकर दे। अम्लतास १ तोला क्वाथ बनाकर दे सकते है।

(२) भूख बढाने वाली और हाजमा करने वाली दवाइयाँ

देनी चाहिए। भोजन हल्का व पौष्टिक और निवास स्थान स्वच्छ-हवा दार होना चाहिए। रोगी को रोज प्रात साय टहलने की आदत डालनी चाहिए। मांसाहारी व्यक्तियो को तीतर, मुर्गा आदि का मास और अडे खाने चाहिए। अल्प मात्रा मे मद्य भोजन के बाद लेवे।

(३) नागबला की जड का चूर्ण ३ से ६ माशा घी और शहद से चाटें। इसके साथ रोगी को केवल दूध भात के पथ्य पर रखे।

(४) पीपल, खाड और मुनक्का इन तीनो को समान भाग लेकर नित्य २-३ तोला प्रातः साय खावे। इससे तपेदिक, श्वास, कास दूर होते हैं।

(५) असगंध, पीपल, और मिश्री समान भाग मे लेकर चूर्ण बनाकर ३-६ माशा शहद के साथ नित्य चाटें।

(६) शुद्ध शिलाजीत ४-८ रत्ती को दूध के अनुपान से सेवन करें।

(७) एक पाव दूध में लहसुन की ८-१० कलिया उबालकर खावें। इससे मुलेहठी चूर्ण ३ माशा मिलाकर भी ले सकते हैं।

(८) **सितोपलादि चूर्ण**:— सितोपला (मिश्री) १६ भाग, वंशलोचन ८ भाग, पीपल ४ भाग दालचीनी [पतली छाल वाली] २ भाग और छोटी इलायची के दाने १ भाग सबका महीन चूर्ण बनावें। २ से ४ माशे की मात्रा में घी और शहद से चटावें।

कास (खांसी)

पहिचान—धुंआ भीतर जाने से, धूल आदि भीतर जाने से, खूब कसरत करके रुखा अन्न खाने से, भोजन के श्वास मार्ग में चले जाने से, मल मूत्र और छिक के वेगो को रोकने से, मार्ग की थकावट से, और चिकने भोजन करने से खांसी पैदा होती है।

खांसी दो प्रकार की होती है। (१) सूखी तया (२) गीली। प्राय: सूखी खासी रह रहकर चलती है और गले में खराश और चुभन होती है। कफ नही निकलता है। गीली खाँसी मे कफ गिरता है। यह प्राय. सुबह शाम चलती है। कफ गिरने से खासी में आराम मालूम पडता है।

चिकित्सा—(१) पीपल, पीपलामूल, सोठ और बहेडे को सम भाग लेकर चूर्ण बनाकर ३ से ६ माशा चूर्ण शहद मिला कर चाटे तो इससे गीली खासी रुकती है।

(२) काली मिर्च का चूर्ण १ माशा शहद के साथ चाटे।

(३) काली मिर्च के चूर्ण में दुगुना गुड मिलाकर गोलिया बनावे। इन गोलियों को चूसने से खासी में आराम होता है।

(४) कटेरी के काढे मे शहद मिलाकर पीना चाहिए।

(५) फुलाई हुई फिटकरी के चूर्ण ४ रत्ती में मीठा तिली का तेल मिलाकर दिन में ४ बार लेने से सूखी खासी ३ दिन में अवश्य मिटती है।

(६) अदरक रस १/२ से १ तोले में शहद में मिलाकर चाटने से खांसी और श्वास दूर होते है।

(७) बहेडे को भूभल मे भून लेवे। इसको मुंह मे रखकर चूसने से खाँसी और श्वास में लाभ होता है।

(८) हरड को भूभल में भून कर इसके साथ सोठ मिलाकर चूसने से खासी दूर भागती है।

(९) सुहागे की खील का चूर्ण २-३ रत्ती शहद से चटावे।

(१०) कटेरी और अडूसा का काढा बनाकर उसमें शहद और पीपल का चूर्ण डालकर पीने से कफयुक्त खासी ठीक होती है।

काली खांसी या कुकुर खांसी

पहिचान —यह बच्चो में होने वाला संक्रामक रोग है। इस रोग की उत्पत्ति 'हिमोफिल्स पटयुंसिस' नामक जीवाणु के कारण होता है। ये जीवाणु रोगी के मुंह, नाक, गले में रहते हैं और छींकते व खासते समय थूक व कफ की बिंदुओ द्वारा स्वस्थ बच्चो मे जाते है।

रोग के प्रारम्भ मे हल्की खांसी, गला खराब होना और साधारण बुखार होने से होता है, यह बढकर दो सप्ताह बाद भयंकर खासी का रूप ले लेता है। इसके साथ जुकाम के समान लक्षण मिलते है—छीक आना, आखों से पानी बहना, खासी दौरे ठहर-ठहरकर आते हैं और प्रत्येक दौरा कई कई मिनट तक रहता है। खांसते हुए बच्चे का चेहरा लाल हो जाता है। इस समय 'हुप' के समान सास भीतर लेने के समय विकृत ध्वनि होती है। इसी के बाद प्राय कै हो जाती है।

इस खासी मे फेफडो के अन्य भयंकर रोग पैदा हो जाते हैं। यह रोग फरवरी से अप्रेल के महीनो मे खासतौर से होता है। रोग की अवधि प्राय: दो महीने होतो है।

बचने के उपाय —(१) रोगी बालक को दो माह तक दूसरे बालको से दूर रखे।

(२) बच्चो को ठण्ड से बचावे।

(३) गर्म और पौष्टिक भोजन खाना चाहिए।

(४) गले को साफ रखें।

चिकित्सा —(१) रोगी को गरम और ताजी हवा वाले वातावरण मे रखना चाहिए। सीलन और ठण्ड से बचाना चहिए।

(२) बच्चो को हल्का, जल्दी और आसानी से पचने योग्य पौष्टिक सरल भोजन देना चाहिए। दूध में उबालकर अजीर, खजूर, छुहारा और मुनक्का देना चाहिए।

(३) गावजुबा, गुलबनफ्शा, मुनक्का और खूबकला मिलाकर बनाया हुआ काढ़ा पीने को दे।

(४) फुलाई हुई फिटकरी का चूर्ण २ से ३ रत्ती शहद के साथ चटावे।

दमा (श्वास)

पहिचान — वायु कुपित होकर फेफडे में रहने वाले कफ को सूखा देता है । इससे श्वास की गति मे रुकावट होती है । इसको श्वास रोग कहते है । व्यवहार मे '**तमक श्वास**' नामक श्वास रोग अधिक मिलता है । इसे ही '**दमा**' कहते हैं । इसमें बार-बार तेज खांसी चलती है । खासी के साथ कफ निकलता है । जब कफ खुश्क होकर गले में अड़ जाता है, तब रोगी को अधिक कष्ट होता है और जब कफ ढीला होकर निकल जाता है तब आराम मालूम होता है । सोते समय और लेटते समय खांसी और श्वास का वेग अधिक हो जाता है । रोगी लेटकर नही सो सकता है । उसे बैठने से आराम मालूम होता है । श्वास का जब दौरा होता है तो रोगी बेहोश-सा हो जाता है । श्वास रुक जाता है । प्यास लगती है, आंखें चढ़ जाती है । मस्तिष्क पर पसीना आता रहता है और पीड़ा भी होती है । सारा शरीर ढीला हो जाता है । रोगी गरम चीजों को अधिक चाहता है । बरसात, सर्दी, सामने की हवा का सेवन करने से, ठण्डे और कफ करने वाली वस्तुओ के सेवन से श्वास का दौरा बढ जाता है ।

चिकित्सा —(१) दशमूल (वेल, अरनी सोना-पाढा, गम्भारी, पाडल इन पाचों के मूल की छाल, छोटी कटेरी, बडी कटेरी, गोखरू सरिवन और पीठवन, इनका पचाग,) का काढा करे इसमें १ माशा पोहकरमूल का चूर्ण मिलाकर पीने से दमा, खासी पसली का दर्द दूर होता है ।

(२) हरड २ तोले के काढे मे १ माशा पीपल का चूर्ण मिलाकर गरम जल से पीवे ।

(३) छोटी पीपल और सेधानमक का चूर्ण अदरक के रस के साथ चाटे ।

[४] भारंगी ६ माशा और सोठ १ माशा के काढे में गुड मिलाकर पीना चाहिये ।

(५) अडूसे के पत्तो का रस (१ से २ तोला) शहद के साथ मिलाकर पिलावे ।

(६) पुराना गुड १ तोला और कडुवा तेल १ तोला दोनों मिलाकर चाटने से श्वास मे लाभ होता है ।

(७) पोहकर मूल का चूर्ण १ माशा, जवाक्षार १ माशा, काली मिर्च चूर्ण १ माशा गरम जल के साथ मिलाकर चाटे ।

(८) कायफल, पोहकर मूल, काकडासिंगी और पीपल का चूर्ण १-३ माशा शहद से चाटे । इससे खाँसी और दमा ठीक होते है ।

(९) हल्दी का चूर्ण ३ माशा, गरम जल से प्रात साय खावे; खटाई न खाए ।

(१०) आक के पत्तो की भस्म, नमक और काली मिर्च पान के रस के साथ लेवे ।

हिचकी [हिक्का]

पहिचान —अधिक भोजन से, तीक्ष्ण और चरपरे पदार्थों के खाने से, शीघ्र भोजन करने से, भारी और कब्ज करने वाले पदार्थ खाने से, मल, मूत्र के वेगों को रोकने से, शीतल भोजन करने से, अधिक व्यायाम और अधिक परिश्रम करने से, अधिक रुखे पदार्थों के खाने से, अधिक मार्ग चलने से, हिचकी शुरु हो जाती ।

चिकित्सा:—(१) सोठ १ माशा और शहद ६ माशा मिलाकर चाटने से हिचकी दूर होती है ।

(२) ६ माशा शहद, एक माशा सेंधानमक, २ तोला बिजोरे या चकोतरे का रस या उसकी केशर मिलाकर चाटने से हिचकी दूर होती है । इसे दिन में ३-४ बार चाटना चाहिए ।

(३) इलायची मुंह मे रखने से हिचकी दूर होती ।

(४) १ तोला तुलसी के रस मे, १ माशा इलायची का चूर्ण मिलाकर पिलाने से हिचकी दूर होती है ।

(५) सेंधानमक को पानी में घोल कर नाक में टपकाने से तुरन्त हिचकी बन्द होती है ।

(६) मोर के पख के चंदो से, (चमकीला भाग) की काली भस्म ३ रत्ती और पीपल का चूर्ण ३ रत्ती, शहद के साथ मिलाकर चटावें । इसे कई बार चटाना चाहिए ।

(७) नौसादर और चूने को मिलाकर सूंघने से हिचकी बन्द होती है ।

(८) सास रोकर प्राणायाम करें ।

(९) जल में सोठ घिसकर सूंघने से, हिचकी बन्द होती है।

[१०] रोगी का ध्यान दूसरी ओर बदलने से, भी हिचकी बन्द होती है ।

[११] सोठ पीपल, आमला और मिश्री का चूर्ण शहद से चटावे ।

हृदय रोग
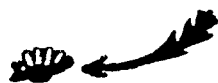
पहिचान :— छाती के बाए' भाग में दोनों फेफड़ो के बीच मे हृदय स्थित होता है । यह शरीर में खून का दौरा कराने वाला यन्त्र है । परिश्रम से तेज आवाज सुनने से या किसी चिन्ता में हृदय की धडकन वढ़ जाना, छाती के वाये भाग में दर्द होना, मन की च चलता, नाडी की गति तेज व अनियमित होना और मूर्च्छा इसके लक्षण है । अधिक श्रम, मैथुन, रूक्ष अन्नपान, भय शोक आदि मानसिक आघात, अत्यन्त गर्मी आदि कारणो से हृदय रोग पैदा होता है । हृदय की गति अचानक रुक जाने 'हार्ट फेल' हो जाता है ।

चिकित्सा :— (१) हृदयरोग की चिकित्सा योग्य चिकित्सको से करानी चाहिए ।

(२) बारहसीग या हरिण के सीग की भस्म ४ रत्ती से १ माशा मात्रा में घृत के साथ या शहद के साथ चाटे । इससे हृदयशूल मिटता है ।

[३] अर्जुन की छाल का चूर्ण १ तोला, दूध एक पाव और जल एक पाव, मिलाकर मन्दाग्नि से पकावे । दूध शेष रह जाने पर छानकर मिश्री और इलायची का चूर्ण [४ रत्ती] मिलाकर पीलावे । यह हृदय की मॉस पेशियो को वल देता है । और हृदयरोग में वहुत लाभकारी है ।

[४]परिश्रम न करे । गर्म, नसीली और तेज वस्तुए' त्याग देवे ।

[५] टहलना उत्तम व्यायाम है । पेट साफ रखे । कब्ज रहने से वेदना बढती है ।

[६] छाती में धड़कन और घबराहट अधिक होने पर अकीकपिष्टी या प्रवालपिष्टी ४ रत्ती, गुलकन्द या सेव के मुरब्बे के साथ देवें ।

[७] पुष्करमूल का चूर्ण १ माशा, शहद के साथ चाटे । यह दर्द और घबराट को दूर करता है ।

अध्याय-७

सारे शरीर में होने वाली बीमारियां

रक्तपित्त नाक, मुँह, कान, मूत्रमार्ग आदि से खून गिरना

पहिचान—पित्त द्वारा रक्त खराब हो जाने पर शरीर के किसी भी भाग से, खासकर भीतर की कोमल झिल्ली में से चू-चू कर रक्त निकलता है। इसे 'रक्त-पित्त' कहते हैं।

यह रक्त पित्त के द्वारा खराब होने से अच्छे रक्त से भिन्न होता है। अधिक समय तक धूप मे घूमने से, अधिक व्यायाम और परिश्रम से, अत्यन्त शोक से, मार्ग चलने से, अति मैथुन से, तीक्ष्ण गर्म चरपरे, खारे, नमकीन, खट्टे पदार्थो के अधिक खाने 'रक्तपित्त' रोग होता है। यह दो प्रकार का होता है

उर्ध्वगत्त रक्त-पित्त— अर्थात् नाक, मुह, कान, आँख आदि शरीर के ऊपर के भाग से खून फूट निकलता है। उसें 'उर्ध्वगद रक्त-पित्त' कहते है। इसमे कफ भी मिला रहता है।

— **अधोगत रक्त-पित्त**— अर्थात् गुदा, मुत्रेन्द्रिय आदि शरीर के नीचे के भागो से खून फूट निकले तो इसे 'अधोगत रक्त-पित्त' कहते है इसमें वायु का सयोग होता है।

चिकित्सा— (१)-वकरी या गाय का दूध ठन्डे जल से स्नान, ठन्डी हवा, फूलो की माला पहनना, चादनी रात मे वैठना पुराना चावल, गेहूँ हितकार होता है गरम और तली हुइ चीजे न खावे दही, नमक, उडद, सरसो, वैगन, मसाले आदि चोजे न खावे।

(२) अडूसे की पत्तियों का रस या अडूसे के काढे में शहद मिलाकर पिलावें

(३) ऊर्ध्वगत रक्त पित्त में पीपल की लाख का चूर्ण ३ माशा घी और शहद में मिलाकर दिन में ४ वार चटावे ।

(४) अधोगत रक्त पित्त में मोच रस का चूर्ण दूध के साथ दें ।

(५) सोनागेरु १ माशा, दूब के रस में शहद मिलाकर चटावे

(६) आवले का कपड़छान चूर्ण मिश्री मिलाकर पिलावें ।

(७) मुनक्के के काढे मे मिश्री मिलाकर पिलावे ।

(८) फिटकरी के फूले के चूर्ण का नसवार लेने से नाक और मुह से आने वाला खून बद होता है ।

●●●

पान्डुरोग, खून की कमी, एनीमिया

पहिचान — अधिक कसरत (परिश्रम) और मैथुन करने से, सब प्रकार के नमक और खटाई अधिक खाने से, अधिक शराब पीने से मिट्टी खाने से, दिन मे सोने से, लाल मिर्च आदि तीक्ष्ण पदार्थों का अधिक सेवन करने से टट्टी, पेशाब के वेग रोकने से, धूप या अग्नि का सेवन करने से पाण्डुरोग हो जाता है।

इसमे त्वचा, (आंख की पलको के भीतरी झिल्ली) मल, मूत्र और नख पाण्डु वर्ण (पकी हुई पत्तियो के समान कुछ पीलापन लिए हुए सफेद रग) के हो जाते है, साथ ही सूजन, उल्टी बुखार, खासी सास चलना और अग्नि की मदता लक्षण पाये जाते है।

रस से पित्त की सहायता से खून बनता है। उपर्युक्त कारणों से रस से रक्त नही बन पाता और बने हुए रक्त मे पित्त की अधिकता होकर रक्त की कमी हो जाती है। इस प्रकार खून की कमी को पाण्डु रोग (अग्रेंजी मे एनीमिया) कहते है। खून की कमी से चमडी की लालिमा और तेज कम हो जाता है। चमडी पीली फीकी हो जाती है। इसे ही पाण्डुरोग कहते है।

चिकित्सा — (१) मुनक्का का नित्य सेवन करें। दुध मे उबालकर लेवे।

(२) गोमूत्र में भिगोकर सुखाई हुई हरड का चूर्ण ३ माशा गोमूत्र या गरम जल से सेवन करें।

(३) चित्रक, अजमोद, सेंधानमक, सोंठ, कालीमिर्च, इन सब का चूर्ण गाय के मट्ठे के साथ पीने से पाण्डुरोग, बवासीर, मदाग्नि रोग दूर होते हैं।

(४) मण्डूर भस्म ४ रत्ती और पीपल (छोटी पीपल) का चूर्ण ४ रत्ती, मिलाकर गाय के दूध से पीवे। पाण्डुरोग और पुराना जुकाम ठीक होता है।

(५) ताज आंवले का रस ५ तोला और २ तोला शहद मिलाकर पीने से पाण्डु रोग ठीक होता है।

(६) यदि मिट्टी खाने से पाण्डु हुआ हो तो जुलाब लेकर मिट्टी बाहर निकाल देनी चाहिए।

पीलिया (कामला)

पहिचान:—यह भी खून की बिमारी है। खून में पित्त की अधिक मात्रा वढ़ जाने से यह रोग होता है। इसमें चमडी, टट्टी, पेशाव और आखे व नाखून के मूल भाग पीले और लाल (हल्दी जैसे) रग के हो जाते है। शरीर मे जलन अधिक व कमजोरी बढ जाती है। और कभी-कभी थूक भी पीले रंग का आता है। हर एक चीज पीली नजर आने लगती है। मु ह का स्वाद कड़ुवा होता है। कब्ज, उल्टी, अरोचक, वुखार, खासी, पतलीदस्त, सास फूलना, यह लक्षण होते हे।

रोग पुराना होने पर हाथ, पैर, मु ह पर सूजन हो जाती है, पीलिया के एक प्रकार मे नेत्र पीले होते है किन्तु दस्त का रंग सफेद (मटमैला) होता है।

चिकित्सा—(१) हरड, बहेडा, आवला, गिलोय, अडूसा, कुटकी, चिरायता, नीम की भीतरी छाल को बरावर मात्रा में लेकर जो कूटकर रक्खे। २ तोला लेकर ८ गुने जल मे उबालकर चौथाई शेप रहने पर उतारकर छानकर ठण्डा होने पर शहद मिलाकर पिलावे। इससे पीलिया ठीक होता है।

(२) कुटकी का महीन चूर्ण बनाकर सुवह-शाम १ से ३ माशा, जल के साथ लेवे। इससे दस्त पतले होकर पीलिया ठीक हो जाता है।

(३) दारू हल्दी के काढे मे नीम का रस और शहद मिलाकर चाटने से पाण्डु और कामला रोग दूर होते है।

(४) सोठ के चूर्ण को दूध मे उबालकर पीना चाहिए।

(५) असली शुद्ध शिलाजीत व सोठ ४ रत्ती, गोमूत्र के साथ खाने से पीलिया दूर होता है।

(६) पीलिया के रोगी को दलिया या खिचडी ही खाने को दिये जाय। पुराने भात हरी सब्जियो का शाक, गरम दूध, नमक

मिलाई हुई छाछ (जो घी और चिकनाई में रहित हो) देना चाहिए। घी बिल्कुल कम देना चाहिए। तली हुई चीज, तेल, मिर्च, मसाला, मछली, मांस बिल्कुल ही नही खावें।

(७) पतली मूली का रस ४ तोला शक्कर १ तोला मिलाकर दिन मे ३ बार पीवें।

(८) प्रतिदिन रात को सोते समय हरड़ का चूर्ण ६ माशा गरम जल से लेवें।

●●

प्लीहा (तिल्ली) बढ़ना

पेट के बाए भाग में पसलियो के नीचे तिल्ली होती है। पुराने बुखार, मलेरिया, आंत्रिक ज्वर (टाइफाइड), काला अजार, और अन्य क्षीणकारी बीमारियों के कारण तिल्ली बढ़ जाती है।

चिकित्सा:—(१) रोहिडे (रोहितक) के पेड़ की छाल का काढा बनाकर जवाखार (१ माशा) मिलाकर पीवे। तथा तिल्ली की सूजन पर छाल का गरम लेप करें।

(२) जवाखार १ से ३ माशा, गोमूत्र के साथ पीवें।

(३) शंखभस्म १ माशा, शहद से सेवन करे।

●●

यकृत 'जिगर' का बढ़ जाना

पहिचान:—पेट में दाहिनी ओर पसलियों के नीचे यकृत (जिगर) होता है। मलेरिया बुखार, पुराने बुखार, अधिक शराब पीने, पुरानी पेचिश, अन्नपान की खराबी और विष प्रभाव के कारण यकृत (जिगर) मे सूजन हो जाती है। इससे शरीर में खून की कमी हो जाती है। भूख नहीं लगती। अपचन, कब्ज या दस्ते लगना. हल्का बुखार रहन और बेचेनी रहना—लक्षण होते हैं।

चिकित्सा.—(१) रोहिडे की छाल का काढा पीवे।

(२) सहिंजने और वरुण की छाल का काढा पीवे तथा इसका यकृत-प्रदेश पर लेप करे।

(३) पीपल का चूर्ण ४ रत्ती, मधु के साथ चाटे।

(४) पेट साफ रखने के लिए जुलाब देवे। यदि दस्त पतले हो तो 'धान्यपंचक क्वाथ' (जो अतिसार की चिकित्सा में बताया गया है) पिलावे। ●●

मोटापन 'मेदोरोग'

पहिचान—इस रोग मे शरीर में चर्बी का जमाव अधिक हो जाता है। व्यायाम न करने से, अधिक सोने से, चिन्ता-रहित जीवन विताने से, कफ वढाने वाले अन्नपान जैसे—मीठे, चिकने और भारी पदार्थों के सेवन से चर्बी वढती है। ऐसा व्यक्ति कोई काम नही नहीं कर सकता, थोडे ही परिश्रम से सास फूलने लगता है। उसे भूख, प्यास और नीद ज्यादा आती है। वदन ढीला रहता है। पसीना ज्यादा आता है। पसीने मे वदवू आती है। चर्बी के अभाव होने से शरीर मोटा हो जाता है। इसकी जीवन शक्ति, मैथुन शक्ति और प्रजनन शक्ति कम हो जाती है। वदन पर चमडी के रोग और मधुमेह आदि होने की संभावना रहती है। चर्बी का जमाव पेट, और हाथो पैरो पर अधिक होता है।

चिकित्सा—(१) शारीरिक और मानसिक श्रम करना, पर्याप्त टहलना, शास्त्र-चिन्तन करना और रुखे अन्नपान का सेवन करना हितकार होता है। ऐसे व्यक्ति को पुराना गेहूँ और जौ की रोटी खानी चाहिए।

(२) १ तोला शहद, ४ तोले गरम जल में मिलाकर प्रातः पीना चाहिए।

(३) मक्खन निकाला हुआ मठ्ठा पीना चाहिए। इसमें पंच-कोल (पीपल, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, सोठ) का चूर्ण १ से २ माशा मिलाकर पीना अच्छा है।

(४) अरणी की छाल का काढा वनाकर इसमें १ माशा शुद्ध शिलाजीत मिलाकर पीना चाहिए।

(५) पीपल का चूर्ण ४ रत्ती से १ माशा, शहद से चाटें।

वात-रोग

पहिचान — वायु से शरीर के किसी भी भाग में विकार हो सकता है । वायु का प्रकोप दो प्रकार से होता है [१] कमजोरी से और [२] वायु के मार्ग में रुकावट होने से । जो वायु का विकार शारीरिक कमजोरी से पैदा होता है उसमें औषध चिकित्सा करनी पडती है और जो वायुका प्रकोप मार्ग की रुकावट से होता है, उसमे उपवास, हल्का भोजन, पसीना लाना ठण्डे और उष्ण दोनों प्रकार के द्रव्यो का सेवन कराया जाता है । वैसे, वायु के अनेक रोग होते है । यहा वायु के दो रोगो का विचार करेंगे । जो खासकर मिलते हैं ।

(१) गृध्रसी (सायटिका):—इसमें कुल्हे, जाँघ, घुटने और पैर की एडी तक होता है । दर्द की शुरुआत कुल्हे के पिछले हिस्से से होकर सारे पैर में अथवा पैर के कुछ हिस्से में दर्द हो जाता है । यह दर्द सुई चुभने जैसा तीखा होता है । अकड़न, जकड़ाहट और फड़कन होती है । रोगी लगडाकर चलता है ।

चिकित्सा — [१] छिले हुए लहसन की गुदी २ तोला, ८ तोला दूध और ८ तोला पानी मिलाकर पकावे; जब दूध शेष रह जाय तब सुबह-शाम पीने को देना चाहिए ।

[२] २ तोला एरन्ड का तेल १ पाव ताजे गोमूत्र मे प्रतिदिन सुबह, १ महिने तक पीवे ।

[३] एरण्ड के बीज की गुदी को दूध में पकाकर, गुड या चीनी मिलाकर, खीर की तरह खानी चाहिए ।

[४] हरसिंगार के पत्तो का रस या काढा ६ तोला प्रतिदिन पीना चाहिये ।

[५] एरण्ड की जड का काढ़ा बनाकर, सोंठ का चूर्ण २ माशे मिलाकर पिलाये ।

[६] दशमूल या सोठ के काढ़े मे एरण्ड का तेल मिलाकर पिलावे ।

[७] असगंध, विधारा और सोंठ इनको समभाग चूर्ण बनाकर ३ से ६ माशा गरम दूध से सुबह शाम लेवें ।

[८] दर्द अधिक होने पर नमक की पोटली से सेंक करें ।

[९] सहिंजने के छाल और पत्तो के रस को २-४ माशे मात्रा में पिलावे ।

(१०) "सोठ, सुहागा, सेधानमक, गाधी । सहिजन के रस वरिया वाधी । सत्तर शूल और अस्सी वाई । कहे धनन्तर छन में जाई । [लोकोक्ति] ।

(२) लकवा (पक्षाघात) : (एक अंग : हाथ पैर आदि : अथवा शरीर के आधे भाग की क्रियाशक्ति नष्ट होना)

शरीर का १/२ भाग [कमर से ऊपर का या नीचे का भाग या दाया या वाया आधा भाग] और सारे शरीर में क्रिया करने की शक्ति का नष्ट होना 'लकवा' कहलाता है । इसमें रोगी की हिलने-डुलने और चलने-फिरने की शक्ति नष्ट हो जाती है । कभी-कभी बोलने में असमर्थ रहता है । यह कभी-कभी केवल हाथ व पैर में ही होता है ।

लकवे की चिकित्सा : [१] नेगड की पत्ती का रस १ तोला और शहद १ तोला मिलाकर सुबह-शाम पीवें । (२) छिलके उतारे हुए लहसन की गुदी ६ माशा और मक्खन १ तोला मिलाकर खावें अथवा लहसन की गुदी २ तोला चौगुने दूध और चौगुने पानी में औटाकर दूध शेष रहे तब उतारकर छानकर पीलावें । (३) असगंध का चूर्ण ३ माशा दूध से नित्य सुबह-शाम लेवें । (४) दशमूल के काढ़े में शुद्ध गुग्गल ४ रत्ती मिलाकर पीवे ।

गठिया या गठियावात–आमवात

पहिचान— इस रोग में ग्राम ग्रौर वायु दोनो बढे हुए रहते है। इसमें सब ग्रगो की या किसी एक सधि में सूजन ग्रौर पीडा होती है। ग्रगो में जकडन ग्रौर भारीपन रहता है। बुखार रहता भोजन का परिपाक नही होता। ग्रग्नि की मंदता ग्रौर प्यास ग्रधिक लगती है। ग्रातो मे गुडगुडाहट ग्रौर ग्राफरा रहता है, पेशाव ग्रधिक ग्राता है ग्रौर नीद नही ग्राती। सूजन एक जोड से हटकर दूसरे जोड़ में चली जाती है।

(१) **चिकित्सा**— गठिया के रोगी को पंचकोल का चूर्ण मिलाकर (पंचकोल चूर्ण २ तोला, जल २५६ तोला) उवालकर जब ग्राधा शेष रहे तव उतारकर छानकर पीने को देना चाहिए।

(२) दूध में पचकोल का चूर्ण (सोठ, पीपलामूल, चव्य, चित्रक) को उबालकर देवे।

(३) सोठ का चूर्ण २-३ माशा, पुनर्नवा के काढे या गरम जल के साथ पीना चाहिए।

(४) १ छटाक गौ मूत्र में या गरम जल में १-२ तोला एरण्ड तैल मिलाकर रोगी की कई दिनो तक पिलाना चाहिए।

(५) गठिया रोग मे एरण्ड तैल का उपयोग बहुत हितकार होता है। इससे कोष्ठ शुद्धि होती है ग्रौर ग्राम निकल जाता है।

(६) एरण्ड की जड, गोखरु, रासना, सौंफ ग्रौर साठी की जड पुनर्नवा का काढा पीलावे।

(७) एरण्ड की बीज की गुदी दूध में पकाकर खीर के समान पिलावे।

(८) सोठ, हरड़, पीपल, निशोथ ग्रौर काला नमक, समभाग लेकर चूर्ण बना ले। इसमें से ३ माशा गरम दूध के साथ देवे।

(९) चोब चोनी का चूर्ण ३ माशा, दूध के साथ सेवन करे।

सूजन (शोथ, ईडिमा)

पहिचान—सारे शरीर में या आधे शरीर में या किसी एक अंग में शोथ या सूजन हो सकती है। चोट लगने से, पकने या घाव बनने से पहले जो सूजन होती है, वह इससे भिन्न है, उसे 'व्रणशोथ' कहते हैं।

सूजन का कारण खून और रस का दौरा ठीक नहीं होना है। मांस आदि धातुओं में रस इकट्ठा हो जाता है। इससे सूजन पैदा हो जाता है। कमजोरी, खून की कमी, हृदय रोग, आदि इसके कारण हैं। खटाई खाने, कब्ज रहने, दिन में सोने मैथुन करने, विरोधी और जलन करने वाले भोजन, मांस-शाक, वेगों को रोकना, ये सब बातें शोथ वाले रोगी को बढ़ाने वाली होती हैं।

चिकित्सा :— (१) हल्का, शुष्क और गरम भोजन करें।

(२) हरड का चूर्ण ६ माशा और पुराना गुड १ तोला मिलाकर खावे अथवा पीपल का चूर्ण १-२ माशा गुड़ के साथ मिलाकर खावें।

(३) पुनर्नवा की जड, नीम की छाल, परवल के पत्ते, सोंठ, कुटकी, गिलोय, देवदार और हरड को समभाग लेकर जौ कूटकर २ तोला मात्रा में ३२ तोला जल में उबालकर २ तोला बाकी रहने पर छानकर शहद मिलाकर पीवें। यह सूजन में बहुत उपयोगी काढा है।

कुष्ठरोग, (चमडी की बिमांरियां, खून खराबी)

पहिचान :—शरीर की चमडी आदि को खराब देखने में बुरी, करने वाली बीमारियाँ "कुष्ठ" कहलाती है । इस प्रकार चमड़ी की सारी बिमारियो को इसमें शामिल किया जाता है । इसमें खून और चमडी की खराबी होती है ।

दूध-मछली आदि विरुद्ध अन्नपान, कच्चे और भारी अन्नपान, भोजन के ऊपर भोजन करना, मल-मूत्र आदि के वेगो को रोकना, भोजन के बाद कसरत करना, अधिक अग्नि और धूप का सेवन करना, परिश्रम के बाद तत्काल शीतलजल का सेवन, दिन में सोना, दही-मछली-नमक-उडद-आलू मिट्टी के पदार्थ, तिल-गुड और खटाई का अधिक सेवन, नये अनाज का सेवन, पिता-माता-गुरु-ब्राह्मण और बडो का तिरस्कार करना और अन्य नीच कार्य करने से कुष्ठ रोग पैदा होते है । उपसर्ग से भी कुछ कुष्ठ रोग फैलते है । इनमे गलित कुष्ठ (लेप्रोसी, कौढ) मुख्य है, इसमें हाथ पॉव की अंगुलिया, नाक आदि गल जाते है । विचर्चिका. (गीला एक्जिमा), कच्छु (सूखा एक्झिमा), दाद (दद्रु) पामा (स्कैविज) आदि कुष्ठ रोग के ही प्रकार है । इस प्रकार खानपान की गडबडी, पापकर्म, उपसर्ग और खून की खराबी— ये कुष्ठ रोग के मुख्य हेतु है ।

चिकित्सा :—(१) रोगी को दही, मद्य, मछली, नमक, उड़द, मूली, गुड, विरोधी भोजन और वीर्य-नाश से बचना चाहिए । क्योकि विना इनका परहेज किये कुष्ठ रोग ठीक नही होते ।

[२] पेट को हमेशा साफ रखें । इसके लिए हरड, या त्रिफला या सनाय या अमलतास से वार-बार जुलाब लेते रहे ।

[३] आंवले का चूर्ण ६ माशा, दिन में दो बार, जल या दूध से लेवे ।

[४] नीम के पचाग का चूर्ण ३ से ६ माशा घी या दूध या जल से लेवें । इसमें हरड का चूर्ण, आवला का चूर्ण और मिश्री मिलाकर भी ले सकते है ।

[५] शुद्ध किया हुआ आमलासार गधक ४ रत्ती से १ माशा तक घी और मिश्री मिलाकर, दूध के अनुपान से लेवे ।

(६) **लेप :-** कमीला, देशी घी या तेल में मिलाकर लगावे अथवा नीम के पत्तो को जलाकर काली राख बनावे, इसे घी मे मिलाकर लगावें । अथवा गंधक को पीसकर घी में मिलाकर लगावे ।

[७] ऊंटीया गंधक का चूर्ण सरसो के तेल मे मिला कर मर्दन करने (रगडने) से खुजली मिटती है ।

[८] नीम के बीज का सेवन करें । अथवा बीज का तेल निकालकर चमडी के रोगो में इस्तेमाल करे ।

(९) सुहागा और गधक समान मात्रा मे लेकर नीबू के रस में खरल कर गोलिया बनाले । इसे नीबू के रस मे घिसकर "दाद" पर लगावे ।

सफेद कोढ, श्वित्र ल्युकोडर्मा

पहिचान—चमडी पर सफेद दाग बन जाते है। इनमें किसी तरह की पीडा, जलन और खुजली आदि नही होती। परन्तु दिखाने मे मन को कष्ट पहुँचता है। चमडी का रंग खराब हो जाता है, अत इसे कुष्ठ में माना जाता है। यह अज्ञात कारणो से पैदा होता है। आनुवशिकता भी इसका एक कारण है।

चिकित्सा—बावची का चूर्ण १ से ३ माशा, ठण्डे जल से प्रात साय सेवन करे।

(२) बावची का चूर्ण और नीम का तेल बताशे मे डालकर खाये।

(३) कठगूलर के जड को छाल, चित्रक की जड, नीम के बीज और बावची प्रत्येक समभाग लेकर चूर्ण कर ले। ३ से ६ माशा की मात्रा मे सोते समय गर्म जल से सेवन करे।

●●

पित्ती उछलना [शीत पित्त; अर्टिकेरिया]

पहिचान — शीतल वायु लगने से कफ और वायु कुपित होकर पित्त के साथ मिलकर सारे शरीर में फैल जाते हैं, इसमें त्वचा और रक्त मे विकृति होती है। सारे शरीर मे चमडी पर ततैया (बर्र) के काटने जैसे चकत्ते (बट्टे, बप्पड, ददौडे) हो जाते हैं। तेज खुजली होती है उलटियाँ आती है बुखार और जलन होती हैं। यह रोग प्राय. शीतकाल मे शीतल जल के स्पर्श से होता है। शरीर पर वापड, या ददौडे निकल आते हैं।

चिकित्सा —(१) पेट साफ रखना चाहिए। हरड या अमलतास का जुलाब लेना चाहिए।

(२) स्नान के लिए गुनगुना जल लेना चाहिए। खाने में ठन्डी, चीजे कब्ज करने वाली चीजो और अधिक मिर्च, खटाई आदि न खावें ।

(३) रोगी को कम्बल ओढाकर अजवायन की धूनी देनी चाहिए ।

(४) गेरू, हल्दी, काली मिर्च, मजीठ, अडूसा इन का चूर्ण ६ माशा शहद के साथ चाटें ।

(५) आवले का चूर्ण ६ माशा पुराना गुड १ तोला मिलाकर जल के साथ प्रात साय लेवे ।

(६) अजवायन ३ माशे और पुराना गुड १ तोला मिलाकर सुबह शाम लेना चाहिए।

(७) हल्दी का चूर्ण ३ माशा और मिश्री या शहद १ तोला मिलाकर सुबह शाम सेवन करें।

(८) हरड, बेहडा, आवला, नीम की छाल, मजीठ, बच, कुटकी, गिलोय और दारू, हल्दी, इन नौ द्रव्यो को एक-एक तौला लेकर जौ कुटकर रखलेवे। यह कुल नौ तौला होगा। इसके तीन भाग कर प्रतिदिन एक भाग (इस प्रकार तीन दिन तक आठ गुने जल में पकाकर चौथाई बाकी रहने पर उतार कर शहद मिलाकर पिलावे। (इसे " नवकार्षिक क्वाथ" कहते हैं।)

(८) ददौडो पर सज्जीखार या मीठा सोडा पानी मे घोलकर या सरसो के तेल मे मिलाकर लगाना चाहिए ।

अध्याय-८

पेशाब की बिमारियां

पेशाब रुकना, पथरी (मूत्रघात और अश्मरी)

पहिचान :—

मूत्राघात (पेशाब रुकना) :— इसमें पेशाब बिल्कुल नही उतरता, अथवा पेशाब बूंद-बूंद करके बिना दर्द के निकलता है, पेशाब की थैली (मूत्राशय) पूर्ण रूप से भर जाता है—जिससे नाभि के नीचे पेट में उभार हो जाता है ।

अश्मरी (पथरी) :— नाभि, सेवनी, अण्ड और पेडू में दर्द होता है । पथरी के द्वारा पेशाब का मार्ग रुक जाता है और कभी-कभी बिखरी हुई धाराओं के रूप में निकलता है । पेशाब का रग सफेद, धुंधला, पीला या खून जाने से लाल हो सकता है । जोरकर पेशाब करने से बहुत दर्द होता है ।

चिकित्सा .— मूत्राघात और अश्मरी दोनों की चिकित्सा मे प्राय. समानता है .—

(१) पेठे के ४ तोला रस में जौ खार १ माशा मिलाकर पीवें ।

(२) जौ खार १ माशा और मिश्री मिलाकर जल से सेवन करे ।

(३) गोखरु के २ तोला काढे में जौ खार १ माशा मिलाकर पीने से अच्छा लाभ होता है ।

(४) कुश, कास, शर, दाम और गन्ने की जड़ को समभाग लेकर जौकुट करे । १-२ तोला चूर्ण को ८ गुने जल मे क्वाथ बनावे, शेष चौथाई रहने पर उतार कर छानकर पिलावे अथवा इन द्रव्यो से

दूध पकाकर पिलाये । इससे पेशाब खुलकर आता है और मूत्राशय साफ होता है ।

(५) गन्ने का रस प्रचूर मात्रा मे पीवे ।

(६) छोटी इलायची के दाने, पाषाण भेद, शुद्ध शिलाजीत और छोटी पीपल को सम भाग लेकर चूर्ण बनावे । इसकी २ मात्रा लेकर चावल के पानी से देवें ।

(७) गोखरु, तालमखाना, छोटी कटेरी, बडी कटेरी और एरण्ड की जड़ का समभाग चूर्ण बनावे । ६ माशा लेकर मीठे दही के साथ सेवन करे । अश्मरी को निकालता है ।

(८) कुलथी को पानी में उबालकर पीवे और कुलथी की सब्जी बनाकर खावे ।

(९) गोखरु के बीच का चूर्ण ६ माशा शहद १ तोला मिलाकर खावें और ऊपर से बकरी का दूध भी दे ।

(१०) वरुणे की छाल का काढा बनाकर पीवें ।

प्रमेह

पहिचान—जिस रोग में अत्यधिक मात्रा मे और बार-बार पेशाव होता है, उसे 'प्रमेह' या 'मेह' रोग कहते हैं। इसके साथ पेशाव मे गदलापन भी पाया जाता है।

यह एक सार्वदैहिक रोग है। शरीर मे यह रोग पौष्टिक, मीठे और चिकने पदार्थों के अधिक सेवन करने तथा परिश्रम न कर अधिक सोने, बैठने और आराम करने से पैदा होता है।

प्रमेह का ही एक परिणाम (वाद मे होने वाला रोग) पेशाव में शक्कर आना है इसे 'मधुमेह' (डायबीटिज) कहते है।

चिकित्सा—(१) रोगी को नित्य कुछ भ्रमण की हल्के व्यायाम की, शारीरिक श्रम करने की आदत डालनी चाहिए।

(२) अधिक चिन्ता, मानसिक श्रम नही करना चाहिये।

(३) भोजन मे शक्कर, मिट्टी के पदार्थ और चिकने पदार्थ न खाये। जौ, सावा, कोदो और वेसन-गेहूं की रोटी जैसे रुखे पदार्थ सेवन करने चाहिए। इसमे सबसे अच्छा जौ का सेवन है। दही, गुड, मास आदि न लेवे। दिन मे सोना, तैल आदि छोड देवे। ताजा गाय का दूध लेना चाहिए।

(४) हल्दी का चूर्ण २ माशा शहद ६ माशा मिलाकर चाटें।

(५) आवले का चूर्ण ६ माशा शहद १ तोला मिलाकर चाटें।

(६) गिलोय व आवले का रस शहद मिलाकर पीवे।

(७) गिलोय का सत १-२ माशा शहद के साथ चाटे।

(८) शुद्ध शिलाजीत १ माशा की मात्रा मे दूध में घोलकर पीवे

(९) गुडमार की पत्ती का रस या क्वाथ या चूर्ण बनाकर सेवन करे।

(१०) वेल के पत्तों का रस निकालकर शहद मिलाकर पीवे।

(११) जामुन की गुठली का चूर्ण १-३ माशा शहद के साथ चाटे।

(१२) त्रिफला (हरड, वहेड, आवला) का चूर्ण २-४ माशा शहद के साथ चाटे।

(१३) विजयसार की लकडी को पानी में डाल देवे। जब पानी का रंग कुछ लाल हो जाये तो उसे पीवे।

वीर्यरोग (पुरुषों का रोग)

पहिचान :—आजकल यह बीमारी अधिक देखने को मिलती है। फिर भी अधिकतर तो रोगी भ्रम के कारण ही मानसिक रूप से दुखी पाये जाते है।

सहशिक्षा, कामुक चलचित्र देखने, साहित्य के पढने और खान-पान के दूषित होने के कारण अनेकों युवको में वीर्य का पतलापन, स्त्री-सहवास के समय शीघ्रपतन, कभी-कभी बिना स्त्री समागम के ही केवल मन की उत्तेजना-मात्र से ही वीर्य का स्खलन (गिरजाना), स्वप्नदोष, नपुंसकता, इन्द्रिय की शिथिलता आदि रोगो से पीडित हो जाते हैं। इसके साथ शारीरिक दुर्बलता, पाण्डु, स्मरणशक्ति की कमी, भूख कम लगना, विशेष चिन्ताए घर कर लेना, आखो के सामने अन्धेरा छा जाना, भय, कृशता कार्यशक्ति की कमी, कब्ज रहना और पेशाब में कभी-कभी जलन होना आदि लक्षण पाये जाते हे। वास्तव में पौष्टिक आहार-पान का सेवन करने से, शारीरिक परिश्रम व व्यायाम न करने से और विषय-स्त्रीभोग का अधिक चिन्तन करने से ये सब विकार पैदा होते है।

चिकित्सा —(१) हल्का यथाशक्ति व्यायाम करें।

(२) मानसिक शुद्धि रखे। कभी स्त्रीभोग का चिंतन न करे। ईश्वर चिंतन करने से यह कार्य सम्भव हो जाता है। वासना जागृत होने पर प्राणायाम करे व शीतल जल से पैर धोए।

(३) आमले का रस १ तोला, शहद मिलाकर पीवे। अथवा आमले का चूर्ण (रसभावित हो तो उत्तम है) ३ से ६ माशा दूध के साथ सेवन करे।

(४) हल्दी, त्रिफला और गिलोय का समभाग चूर्ण बनाकर मिश्री मिलाकर सेवन करे।

[५] कौच के बीज दूध के अन्दर पकाकर खाये।

[६] असगध का चूर्ण १ तोला, १ पाव दूध मे उबालकर, मिश्री मिलाकर पीवे।

[७] प्याज का रस १ तोला, ३ माशे शहद मिलाकर पीवें।

[८] उड़द की दाल को छिलकारहित करके, घी में भूनकर, दूध में पकाकर, मिश्री मिलाकर खायें ।

[६] असगंध १ भाग, विधारा १ भाग, मिश्री २ भाग, लेकर कपडछान चूर्ण बनाकर रखलेवे । २-३ माशा, गरम दूध से लेवे ।

[१०] गोखरू का चूर्ण ३ से ६ माशा, दूध के साथ सेवन करें।

इन प्रयोगो से वीर्य गाढा बनता है। वीर्य की वृद्धि करने में भी ये योग लाभकारी है । नपुंसकता मिटती है ।

●●

अध्याय-९

फोड़ा और घाव

व्रण शोथ, विद्रधि व्रण

पहिचान:— सूजन (व्रणशोथ) होकर फोडा (विद्रधि) वनता है वह फूटने पर घाव (व्रण) बन जाता है। फोडे दो प्रकार के होते है भीतरी और वाहरी। बाहरी फोडे की चिकित्सा आसानो से की जा सकती है। किन्तु भीतरी फोडा फूटने पर मवाद [पीप] भीतर के अंगो मे भर जाती है जिससे गभीर लक्षण पैदा होते हैं। वाहरी चोट आदि से भी घाव बनता है। इसमे जलन, पीड़ा अधिक होती है।

चिकित्सा— [१] नमक और खटाई न खावें। हल्का और पौष्टिक आहार करें। इससे घाव भरने में मदद मिलती है।

[२] वरने की छाल का काढ़ा वनाकर, उसमे २ रत्ती भूनी हुई हीग, २ रत्ती शु०शिलाजीत मिलाकर पीने से सब प्रकार के घाव ठीक होते है।

[३] संहिजने का काढ़ा, हीग और सेंधानमक मिलाकर पीना चाहिए।

[४] पुनर्नवा और वरने का काढा वनाकर पीना चाहिए।

[५] अलसी या हल्दी की पुल्टिस सूजन परबांधनी चाहिए।

] ३] सूजन पर नीम की ताजी पत्ती, हल्दी, घी, शहद, तिल और जो का आटा ,इनको जल के साथ पीसकर मंदी आच पर पकाकर कपडे पर विछाकर, ऊपर दूसरा कपडा रखकर वाधने से सूजन बैठ जाती है या पक जाती है। और पकी हुई सूजन जल्दी फूट जाती है।

नासूर — इसमे घाव गहरा, पतला, नाली-नुमा होता है। इसिलिए घाव भरने मे समय ज्यादा लगता है।

[१] दारु हल्दी के चूर्ण को थूहर के दूध और आक के दूध में घोटकर बस्ती बनावे। इसे नासूर में रखकर ऊपर से पुल्टिस बाधने से ठीक होता है।

[२] प्रतिदिन घाव को त्रिफला के काढे से धोना चाहिए।

जले हुये घाव—

[१] अलसी के तेल को चूने के जल में फेंटकर लगावें।

[२] शुदध घी में राल का चूर्ण (महीन) मिलाकर लगावें

[३] मुलेठी के चूर्ण को घी में पकाकर, उस घी को जले हुए घाव पर लगावे।

नारू :—

(१) हल्दी और चूने को जल में घोटकर लेप बनाकर लगावें

(२) डीकामली का चूर्ण ३ माशा गरम जल से पिलावे।

बिवाई फटना

(१) तिल के तेल को गरम कर उसमे पिघाला हुआ देशी मोम मिलाकर मलहम बना लेवे। इसे कटी बिवाईयो पर लगावे।

●●

अध्याय-१०

मानसिक बिमारियां

पागलपन (उन्माद)

पहिचान — विरुद्ध और अपवित्र भोजन करने से, विष सेवन से, देवी-देवता, ब्राह्मण, माता-पिता और बडे लोगों का निरादर करने से, इसी प्रकार के अन्य नीच कार्य करने से, अधिक चिन्ता, शोक, भय, काम से मन उन्मत्त हो जाता है। उसे 'उन्माद' (पागलपन) कहते हैं। इसमे रोगी असमय में (बिना प्रयोजन के) हसने या गाना गाने आदि काम करने लगता है। उसकी लज्जा, बुद्धि और निन्द्रा मे फर्क होने लगता है। वह गुप्त बातो को प्रकट करने लगता है। उसके चित्त मे उद्वेग और भ्रम उत्पन्न हो जाता है। शोक, भय, कामादि से होने वाले उन्माद मे रोगी निरन्तर शोक आदि की बात-चीत करता रहता है।

प्राचीन वेद्यों ने उन्माद के ६ भद किये है :-

(१) वायु से होने वाला [२] पित्त से होने वाला [३] कफ से होने वाला [४] तीनो दोषो से होने वाला [५] विष से होने वाला [६] काम भय शोक आदि मानसिक दु खो से होने वाला। दोषज उन्माद मे दोषानुसार लक्षण होते हैं। विषज में विष के अनुसार, शोक भय, कामादि मानसिक दु खों से होने वाले उन्माद में रोगी शोक आदि की बातचित करता रहता है।

इनके अतिरिक्त भूतबाधा से भी पागलपन होता है। इसे 'भूतोन्माद' कहते हैं। भूतो को ग्रह भी कहते हैं। देव, देत्य, पिशाच, सर्प, गन्धर्व, रक्षस, यक्ष, पितर—ये ८ ग्रह होते है। इनके शरीर में आवेश या प्रवेश से भी पागलपन हो जाता है। इनमें विशेष लक्षण

होते है । जैसे देवज उन्माद में पवित्रता, दैत्यज में देवताओं के साथ द्वेष करता, पिशाचज में नग्न रहना, सर्पज में सर्प की भान्ति गमन करना, रक्षौज मे बहुत अधिक भोजन करना, गन्धर्वज मे गाना-गाना यक्षज में दान देना, पितृज मे श्राद्ध करना ।

चिकित्सा — (१) ब्राह्मी की पत्तियां (ताजी गीली हो तो ३ माशा और सूखी हो तो १ माशा) और काली मिर्च १० से १५ नग लेकर जल के साथ घोटकर पीवें ।

(२) ब्राह्मी या मण्डुकपर्णी १ तोला शहद में मिलाकर पीवे ।

(३) मीठी बच का चूर्ण १ माशा, शहद मे मिलाकर चटावे ।

(४) शङ्खपुष्पी का रस १ तोला, शहद मे मिलाकर पिलावे ।

(५) पुराना घी दूध में मिलाकर, प्रतिदिन पीने से उन्माद ठीक होता है ।

(६) गधे का पेशाब प्रतिदिन १ से २ तोला रोगी को पिलावे । इसके लिए यह आवश्यक है कि रोगी को इस बात का पता न लगे कि उसे गधे का मूत्र पिलाया जा रहा है । अन्यथा घृणा होने का भय रहता है ।

(७) पौष्टिक भोजन, दूध, घी, हल्का व्यायाम, इस रोग में हितकर होता है । ●●

मृगी या मिरगी रोग (अपस्मार)

पहिचान — जिस रोग में स्मरण शक्ति का नाश हो जाता है, उसे 'अपस्मार' या 'मृगी रोग' कहते हैं। इसमें रोगी के आंखों के सामने अंधेरा छा जाता है। मुंह से झाग निकलते है। शरीर कांपता है और हाथ-पैर पटकने और ऐंठने लगता है। इसका वेग २० से ३० मिनिट रहता है। बाद मे रोगी पूरे होश मे आ जाता है। अचानक गिरने और जबडा बन्द होने से दाँतो मे अटककर जीभ कट जाती है। इसमें रोगी बेहोश होकर गिर जाता है। उसे गिरने का बिल्कुल ख्याल नही रहता।

हिस्टिरिया और मूर्छा रोग मे भी बेहोशी होती है, किन्तु इन दोनो रोगो ने मुंह से झाग आना और शरीर कांपना, यह लक्षण नही मिलते। अपस्मार के वेग कभी भी होते हैं।

चिकित्सा — (१) मिठी वच का चूर्ण १ माशा मधु के साथ चटावे। साथ में रोगी को केवल दूध और भात के भोजन पर रखें।

(२) शतावरी को दूध में पकाकर पीलावे।

(३) गधे या गधी का मूत्र २ से ४ तोला प्रतिदिन सुबह पिलावे।

(४) रोगी का तालाब, बावडी, नदी, अग्नि के समीप बैठने, पेड और पहाड पर चढने आदि कार्यों से बचाना चाहिए। क्योंकि वेग होने पर रोगी अचानक गिर पडता है और इसकी मृत्यु का भय रहता है।

(५) पेट साफ रखने के लिए हरड या अमलताश का जुलाब देवे।

(६) 'लहसुन" को तेल मे पकाकर सेवन करावे।

(७) गाय, का घी, दूध, दही मूत्र और गोबर मिलाकर ५ से

१० तोला प्रतिदिन प्रात काल पिलावें । इसे 'पंचगव्य' कहते है । यह १ से २ साल तक देना चाहिए ।

(८) ब्राह्मी या मण्डूकपर्णी की लुगदी को शहद मे मिलाकर चटावें ।

(९) पेठे के रस मे शहद मिलाकर चटावे ।

हिस्टिरिया 'योषापस्मार'

पहिचान—यह स्त्रियो और कोमल प्रकृति के व्यक्तियों में होने वाला मृगी का रोग है। इसके दौरे निश्चित समय पर नही होते। किन्तु मृगी से इसका वेग कम होता है। सोते समय या एकान्त में कभी नही होता। रोगी अचानक नही गिरता। इसीलिए चोट नही लगती। आखें और गरदन टेढ़ी नही होती और मुह से भाग नही निकलते। इसका गर्भाशय की विकृति से सम्बन्ध होता है। जिन स्त्रियो को मासिक धर्म ठीक से नही होता, अधिक प्रसव होने से गर्भाशय-दुर्बलता हो जाती है और मानसिक चिन्ताएं व क्लेश निरन्तर बने रहते हैं, तो यह रोग होता है।

चिकित्सा—उसमें वे ही औषधियां बरतें जो 'मृगी रोग' में काम आती है।

मासिक धर्म ठीक न हो रहा हो तो मासिक ठीक आने के दवा दें। (स्त्रियो की बिमारियो के अन्तर्गत नष्टार्तव व कष्टार्तव की चिकित्सा देखे।)

अध्याय-११

बच्चों में होने वाली बिमारियां

बाल रोग

(१) **दस्तें लगना**—(१) चावल की खील, सेधानमक और ग्राम की गुठली का काढा बनाकर, शहद मिलाकर पिलावे।

(२) जायफल, मरोडफली, सेवानमक और सोठ को जल मे घिसकर घासा बनावे और बालक को चटावे। इसमे थोडी केशर मिलाने से अधिक लाभ होता है।

(२) **खांसी, बुखार और दस्तें, उल्टी में**—(१) नागरमोथा, अतीस और काकडासीगी, छोटी पीपल का महीन कपडछन चूर्ण बना उसमें से ८ रत्ती, शहद मिलाकर दिन मे ३-४ बार चटावे।

(२) बच्चो को खासी मे सुहागे की खील का चूर्ण २ मे ३ रत्ती शहद मे चटावे। इसमे मु ह के छाले भी ठीक होते हैं।

(३) **जन्मघूंटी**—सोंफ की जड, वायविडंग, अमलतास का गूदा, छोटी पीपल, छोटी हरड, वडी हरड का छिलका, वाला, सफेद जीरा, अजवाइन, गुलाव फूल, पलाशबीज, मुनका, उन्नाव, भूना हुआ सुहागा और काला नमक इन सबको वरावर-वराबर मात्रा में मिलाकर कपडछन चूर्णकर रक्खे। इसकी १ माशा तक मात्रा। इसे थोडे से गरम जल मे घोटकर गुड मिलाकर बच्चे को पीलावे। इससे बच्चो का अपचन, अफारा, पेट के कीडे, कब्ज और बुखार आदि रोग दूर होते है।

(४) छोटी कटेरी के फूल की केशर १ माशा पीसकर शहद के साथ चटाने से बच्चों की खांसी दूर हो जाती है।

(५) बच्चो की कफज खांसी में लहसुन की भस्म (कालीराख) १-२ रत्ती शहद के साथ चटावे।

(६) बच्चे की उल्टी और दूध निकालने में सोफ और बायविडंग मिलाकर, दूध उबालकर देवे।

(७) सूखा रोग और बच्चे की कमजोरी में मंडूर भस्म और कौडीभस्म (१-१ रत्ती) शहद में मिलाकर देवें। प्रतिदिन जैतून के तेल की मालिश करें।

●●

अध्याय-१२

स्त्रीरोग

औरतों में होने वाली बिमारियां

स्त्रियो मे सामान्य रोगो के अतिरिक्त प्रजनन-संस्थान से सम्बन्धित कुछ खास बिमारिया होती हैं। जिन पर समय पर ध्यान देना जरूरी है। स्त्रियों मे खासकर जननांगों सम्बन्धी, गर्भावस्था में होने वाले, प्रसव के बाद होने वाले कुछ खास रोग होते हैं।

(१) रक्त प्रदर :- योनि मार्ग से असमय में खून जाना, अधिक माहवारी होना, लम्बे समय तक माहवारी होते रहना, 'रक्तप्रदर' कहलाती है। इससे खून को कमी, कमजोरी, सास फूलना, आदि बीमारिया हो सकती है।

चिकित्सा - (१) अशोक की छाल का चूर्ण १ तोला दूध १/२ पाव और पानी १/२ पाव मिलाकर औटावें। केवल दूध शेष रहने पर, छानकर पिलावे।

(२) गूलर के पके फलो का चूर्ण ३ से ६ माशा, मिश्री मिला कर दूध के साथ देवें।

(३) रसोत का चूर्ण ३ माशा, चावल के पानी के साथ पीवे।

(४) बब्बूल की कच्ची फली (सीगरी) का चूर्ण ६ माशा चावल के मांड से लेवें।

(२) श्वेतप्रदर :- इसमें योनिमार्ग से सफेद, बदबूदार और पानी जैसा स्राव निकलता है। इसके दो ही मुख्य कारण हैं—(१) भीतरी जननांगो में सूजन होना (२) जीर्ण व्याधि होना या अत्यन्त कमजोरी होना।

चिकित्सा—(१) असगध का चूर्ण ३ माशा, मिश्री मिलाकर दूध के साथ खावें।

(२) असगध, विधारा और समुद्रशोष का चूर्ण बनावे। ३ से ४ माशा दूध के साथ सुबह शाम लेवे।

[३] शतावरी का चूर्ण ३–६ माशा, दूध के साथ लेवे।

[४] असगध और अशोक की छाल का चूर्ण मिलित ४ माशा, दूध से देवें।

नष्टार्तव और कष्टार्तव:— माहवारी का समय से पूर्व ही बन्द हो जाना "नष्टार्तव" कहलाता है। माहवारी के समय कमर, पेट में दर्द होना, मंद ज्वर रहना, बदन टूटना और रुक रुक कर या काले रंग का खून आना, "कष्टार्तव" कहलाता है।

चिकित्सा— [१] मूली के बीज, गाजर के बीज और मेथीदाना का काढा बनाकर, गुड मिलाकर पीना चाहिए।

[२] ग्वारपाठे के गूदे की सब्जी बनाकर सेवन करें।

(४) गर्भज वमन:- [गर्भावस्था में होने वाली उल्टियाँ]

गर्भावस्था मे गर्भधारण के प्रथम दिन से या कुछ दिनो के बाद से कई स्त्रियो में वमन और बेचैनी, जो अधिकतर सुबह रहती है, गर्भावस्था के ६–७ वें महीने तक रहती है।

चिकित्सा— [१] लौंग जलाकर पानी घिसकर पिलावे।

[२] धनिया ६ माशा, मिश्री १ तोला मिलाकर, चावल के पानी से खिलावे।

[३] गिलोय के काढे मे शहद मिलाकर पिलावें।

[४] अर्क सौफ और अर्क पुदीना, दिन में कई बार देवें।

(५) गर्भजशोथ:—कई स्त्रियो मे गर्भावस्था के अन्तिम दिनों पैरो में शोथ-सूजन हो जाती है। इसमें कुश, कास, सरकडा, डाभ और गन्ने की जड का काढा बनाकर पिलाना चाहिए।

(६ गर्भस्त्राव, गर्भपात और पूर्वकालिक प्रसव (समय से पहले प्रसव होना):— कुम्हार के चाक की मिट्टी ३

माशा को, मिश्री मिले हुए बकरी के दूध के साथ पीना चाहिए। इससे गर्भ के गिरने में होने वाला रक्त स्राव रुकता है।

(२) मुलेठी, लोध का चूर्ण, दूध में पकाकर अथवा मिश्री मिलाकर दूध के अनुपान से लेवें।

(७) सूतिका रोग:-- प्रसव के बाद यदि सारे बदनमें टूटने जैसी पीड़ा, कम्पन, प्यास की अधिकता, शरीर में भारीपन, सूजन, दर्द और दस्ते लगना प्रारम्भ हो जाय तो उसे 'सूतिका रोग' कहते हैं।

चिकित्सा — इसमें वातनाशक चिकित्सा करनी चाहिए।

(१) यदि ज्वर हो तो दशमूल का काढा बनाकर पिलावें।

(२) सूतिका रोग के अन्य लक्षणों में देवदारू, वच, कूठ, पीपल, सोठ, चिरायता, कायफल, नागरमोथा, कुटकी, धनिया, हरड का छिलका, गजपीपल, जवासा, गोखरु, छोटी कटेरी, बड़ी कटेरी, अतीस, गिलोय, काकडासिंघी, कलौंजी, जीरा, सब द्रव्य समभाग लेकर, जौ कूटकर रक्खें। ढाई तोले को १/२ सेर पानी में पकाकर, ५ तोला शेप रहने पर छानकर थोडी हीग और सेंधा नमक मिलाकर पिलावें।

(८) दूध बढ़ाने के लिए :--

(१) शतावरी को दूध में पकाकर पीवें।

(२) शतावरी, साठी चावल और सफेद जीरे का कपडछन चूर्ण बना लेवें। ६ माशा सुबह–शाम गाय के दूध में मिश्री मिलाकर लेवे।

(३) विदारीकन्द ६ माशा दूध के साथ मिश्री मिलाकर पिलावे।

(९) बांझपन:--स्त्रियो में बाझपन अनेक कारणो से होता है। विवाह के उपरान्त लगभग तीन साल के बाद सन्तान पैदा नहीं होती है तो स्त्री और पुरुष दोनो की जांच की जानी चाहिए। स्त्री में गर्भधारण की शक्ति को बढाने के लिए निम्न योग दिये जा सकते है–

(१) नरकचूर, सोठ, वायविडग और नागकेशर, समान भाग लेकर चूर्ण बनावें। सुबह और शाम को ३ माशा चूर्ण घी के साथ चटावे।

(२) असगंध का चूर्ण दूध और घी के साथ पकाकर पीवें। मासिक के बाद चौथे दिन से एक सप्ताह तक इसका सेवन करें। ●

अध्याय--१३

मुंह, नाक; सिर; आंख और कान की बिमारियां

मुख रोग-मुंह की बिमारियां

मुंह में छाले होना :--

अक्सर पेट की खराबी से मुंह में छाले हो जाते है।

चिकित्सा.— न० (१) चमेली की पत्ती को मुख मे रखकर चवाने से छाले ठीक होते है।

(२) रसोत का चूर्ण शहद मे मिलाकर लगाने से छाले ठीक होते हैं।

(३) फिटकरी को पानी में घोलकर उसमे कुल्ले करे।

दन्तवेष्ट (पायोरिया):-

दातो के मसूढ़ो में सूजन और लाली रहती है। इसमें पीप निकलता है। दात हिलने लगते हे। रोगी के मुंह और श्वास में दुर्गन्ध आती है। निगले हुए पीप के कारण अमाशय और आँतों मे सोजिश आ जाती है, जिससे अग्निमद होना, पेट मे दर्द, सुस्ती, खून की कमी और चमडी के रोग हो जाते हैं।

चिकित्सा.— (१) फिटकरी में मिलाये हुए जल से गरारे करें।

(२) नीम की दातुन वरते।

(३) फिटकरी, खड़िया मिट्टी, घिया भाटा (दुग्ध पाषाण) सेधानमक, प्रत्येक, १-१ भाग, देशी कपूर १/२ भाग, इनका महीन चूर्ण कर मंजन करने से मसूडो से खून और पीप आना रुकता है दात स्वच्छ और मजबूत हो जाते है।

(४) सोठ, नागर मोथा, हरड, कत्था, कपूर, सुपारी की जलाई हुई काली राख, काली मिर्च, लगौ, दाल चीनी, प्रत्येक १-१ भाग और सबके बरावर खडिया मिट्टी लेकर महीन चूर्ण करे। इसका मंजन करने से दाँत स्वच्छ एव मजबूत होते है।

३, (दतशूल) दांत का दर्दः—

(१) लोग के तैल का फाया दातो में लगाने से दांत का दर्द शान्त होता है।

(२) कर्पूरधारा का फोया दात मे लगाने से पीडा शान्त होती है (अमृतधारा)।

(३) रुई में फिटकरी रखकर दांत के छिद्र में भरकर मुंह नीचे करके लारे टपकाने से दाँत का दर्द ठीक होता है।

४. कृमिदंतः— दांत में कोड़े लगानाः—

(१) तम्बाकू की पत्ति का चूर्ण दातो पर मलना चाहिए।

(२) हीग को गरम कर रूई मे लपेटकर दांत के छिद्र में भरना चाहिए।

५. कण्ठ शालूक (टोन्सिल की सूजन)

(१) सुहागे की खील का चूर्ण शहद में मिलाकर सूजन पर लगावे।

(२) बबूल की छाल मुंह में रखकर चवाते हुए चूसना चाहिए।

●●

नासारोग-नाक की बिमारियां

जुकाम — [१] गरम पानी मे नीबू निचोड कर पीने से जुकाम में आराम होता है ।

[२] कायफल का कपडछान चूर्ण १ माशा, शहद में मिलाकर चटावे ।

[३] केशर को गाय के घी मे मिलाकर, थोडा गरम कर, नाक मे सुंघाने से पुराना जुकाम ठीक होता है ।

[४] पतली मूली और कुलथी को जल में पकाकर इसका गरम-गरम पानी पीने से लाभ होता है ।

[५] सोंठ, मीर्च, पीपल का चूर्ण सम भाग लेकर दुगुने गुड में मिलाकर चने के बराबर गोलिया बनावे । २-२ गोली गरम जल से दिन मे ४ वार लेवे ।

सिर का दर्द

(१) नौसादर और चूने को मिलाकर सूंघने से शिर का दर्द शान्त होता है ।

(२) हरड, बहेडा, आवला, चिरायता, हल्दी, नीम गिलोय; प्रत्येक ३-३ माशा लेकर १६ गुने जल में पकावे; जब चौथाई शेष रहे तब छानकर १ तोला गुड मिलाकर पिलावें । (यह पथ्यापडग क्वथि) कहलाता है । सब प्रकार के शिर के रोगों में लाभकारी है ।

[३] सूर्योदय के साथ प्रारम्भ होने वाले सिर दर्द, जो प्राय. दोपहर तक रहता है और फिर शात हो जाता है, को "सूर्यावर्त" कहते हैं । गोदन्ती भस्म १ माशा, या प्रवाल भस्म १ माशा, घी और मिश्री के साथ खाना चाहिए । सूर्योदय के पहले मावे में देशी कपूर (बररास) १ से २ रत्ती लपेटकर खावे और ऊपर से दूध पीवे । दूध के साथ जलेबी या मालपुए या रबडी का सेवन हितकर होता है ।

आधा शीशी (आधे शिर में दर्द होना) में भी सूर्यावर्त के ही चिकित्सा करनी चाहिए ।

नेत्ररोग-आंख की बिमारियां

(१) **आंखें आना**—नीम की पत्ती को पीसकर लुगदी बनावें। इसमे थोडा-सा सेधानमक मिलाकर गरम कर आख पर बाधने से सूजन, खुजली आख आना दूर होता है।

(२) रसोत, फिटकरी और सेधा नमक को जल के साथ पीस कर आखो के चारो ओर लेप करे।

(३) त्रिफला (हरड, बहेडा, आवला) के ४ तोला, क्वाथ में फुलाई हुई फिटकरी का २ रत्ती चूर्ण मिलाकर, इसकी ८-८ बूद दोनो आंखो मे दिन मे ४ बार छोडें। ठण्डे मौसम मे कुछ गरम कर, गर्मी में ठण्डा ही डाले।

(४) गुलाबजल मे रसो। घोलकर २-२ बूंद नेत्र में डाले।

(२) **आंख का फूला**—(१) बरगद के दूध मे थोडा सा कपूर मिलाकर आख मे दिन में तीन बार डालने से फूला नष्ट होता है।

कर्ण रोग

(कान की बिमारियां)

(१) कान का दर्द (कर्णशूल):—

(१) सरसो के तेल मे छिलका रहित लहसुन की कलियां पकाकर कान में डाले।

(२) सुदर्शन की पत्ती का गरम रस कान में डालें।

(२) बहरापन बधिरता—

(१) पके हुए बेल के बीजो को कोल्हू मे पेरकर तेल निकालें। वह तेल कान में डालने से बहरापन ठीक होता है।

(३) कान का बहना—कौडी को भस्म को कागज की भूंगली में रखकर कान मे फूंक दें, तो बहना बन्द हो जायेगा।

(२) समुद्रफेन का चूर्ण कागज की भोगली से फूंक कर छोडे।

अध्याय-१४

आकस्मिक दुर्घटनाएं और उनका प्राथमिक उपचार

पहले हमने जिन बिमारियों का उल्लेख किया है, उनसे अति-रिक्त कुछ ऐसी दुर्घटनाए भी होती है जिनसे अचानक बिमारिया उठ खडी होती हैं, जैसे चोट लगना, आग मे जल जाना, पानी में डूब जाना विष खा लेना या विषैले जीव-जन्तु से काट लिया जाना, लू लगना आदि ।

[१] चोट लगना :- कई तरह से चोट लग सकती है । कभी चोट से खून आता है और कभी नही आता; केवल सूजन हो जाती है । यदि केवल सूजन हो गई हो तो सेकना चाहिए । रसौत और फिटकरी को जल मे घोलकर गर्म कर लेप करें । यदि खून बह रहा हो तो उसे रोकने का उपाय करें । तत्काल ठण्डे पानी मे भीगे कपडे से पट्टी बाध दें या वर्फ का टुकडा चोट पर रखने से खून रुक जाता है । चोट की पीडा को शात करने के लिये थोडे से तेल मे हल्दी का चूर्ण डालकर गर्म कर, उसमें रुई के फोहे निचोडकर, सुहाता-सुहाता गर्म फोहे से सेक करें । इससे चोट का घाव जल्द भरता है और पीडा शान्त होती है । अथवा घी मे मुलेठी का चूर्ण डाल कर गरम करें. इसमें रुई के फोहे डालकर, सुहाते गर्म घी से सेंक करें । इससे भी घाव भरता है और पीडा शान्त होती है। मोच या मूंदी चोट पर प्याज हल्दी, आमा हल्दी, थोडा नमक, तिल की खली को मिलाकर, थोड़े से तिल के तेल में गरमकर, उसकी पोटली से सेंकने और उसे ही चोट या मोच वाले स्थान पर सुहाता गरम बाधने से आराम होता है ।

२- आग से जलना :- बदन के कपडो मे आग लगने पर उसे बुझाने के लिए कम्बल ओढना रेत या मिट्टी डालने से आग बुझ

जाती है। पानी नही डालना चाहिए, पानी से आग बुझ जाती है, पर जले अंगो को नुक्सान होता है और पानी लगने से तत्काल वहां फफोले हो जाते हैं।

जले हुए स्थानो पर नारियल का तेल और चूने का पानी मिलाकर, फेंटकर लगावे। दग्ध स्थानो को रूई से ढक देवे, जिससे उन पर हवा, मक्खी, धूल आदि न लग सके। चाय की पत्ती पानी मे खूब खौलाकर उस पानी को भी जले हुए स्थानो पर लगा सकते हैं।

(३) पानी में डूबना :-- पानी में डूबने से श्वास रुक जाता है और श्वास के मार्ग से फेफडो में और अन्न के मार्ग से पेट में पानी भर जाता है। अत सबसे पहले पानी में डूबे हुए व्यक्ति को निकालकर, पैर पकडकर उलटा करके, मुख और नाक से पानी निकलने देवे। फिर औधा लेटकर तथा पेट और छाती के मध्यवर्ती भाग पर छोटा तकिया आदि रखकर, पीठ की ओर से हल्का दबाव डालने से भी पेट और छाती मे भरा हुआ पानी निकल जाता है। चूना और नौसादर सूंघाना चाहिए, इससे रुकी हुई सास फिर चलने लगती है।

डूबे हुए व्यक्ति में कृत्रिम श्वास-प्रश्वास की क्रिया करानी जरूरी होती है। रोगी को चित लिटाकर उसकी पीठ के नीचे तकिया रखकर छाती का निचला भाग ऊंचा कर दे, फिर कुहनी और कलाई के बीच के भाग मे पकड कर दोनो हाथो को झटके के साथ ऊपर उठावे और फिर तत्काल ही उन्हे कोहनी पर मोडते हुए छाती पर मजबूती के साथ दबावे फिर हाथो को ऊपर लेकर फिर दबा दे। इस प्रकार बार बार करते हुए १५ २० मिनट तक करना चाहिए। कृत्रिम श्वास-प्रश्वास कराने की अन्य भी विधिया है।

रोगी को थोडी ब्राडी या मद्य पिलावे। इससे शरीर गर्म होकर हृदय की धडकन मद हो तो ये उपाय सफल होते है।

(४) विष खा लेना:-- भूल से अन्न पान मे अथवा जानबूझ कर विष खा लिया जाता है अलग-अलग विष में अलग-अलग लक्षण होते है। इन लक्षणो को देखकर विष की पहिचान हो जाती है। सभी प्रकार के विषो में प्राथमिक रूप से उल्टी कराकर आमाशय में पहुचा हुआ विष निकाल देना चाहिए। इसके लिए १ छटॉक नमक, पानी में घोलकर रोगी को पिला देवे। इससे उल्टी हो जाती है।

(५) संखिया का विषः--इसके खाने से थोडी ही देर बाद चक्कर, थकान, जी मिचलना और बाद मे जलन, प्यास, खून मिले वमन,पेट में तेज दर्द और कु थन के साथ खून मिले हुए दस्ते (अतीसार) होते हैं, जो बाद मे केवल स्वच्छ पानी जैसे होने लगते है, जैसे हैजे मे होते हैं, पेशाब की थैली में जलन और पीडा, पेशाब कम आना, नाडी तेज, ठण्डा पसीना और बदन ढीला होना—ये लक्षण होते है। अन्त मे तन्द्रा, बेहोशी, आक्षेप होकर मृत्यु हो जाती है।

उपचार —(१) वमन करावे। (२) शीघ्र ही दूध और जल पिलाकर आमाशय धुलावे। (३) अडे की सफेदी और घी मिलाकर पिलावें। (४) बन चौलाई की जड का रस २ तोला प्रति २-३ घण्टे बाद देवे। (५) साठी चावल का भात शक्कर मिलाकर रोज खिलावे।

(२) बछनाभ खाने से—मुह, ओठ, जीभ आदि मे झनझनाहट जलन और सुन्नता, अधिक लार गिरना, उल्टी, पेट मे दर्द, सारे बदन मे झनझनाहट, कपकपी और आक्षेप, श्वास रुकना आदि लक्षण होते है।

उपचार —(१) वमन करावे। (२) सेधा नमक, हल्दी, शहद और घी मिलाकर २ तोला मात्रा में ४-५ बार देवें।

(३) कुचला का विष खाने से—मुह मे कडुवा स्वाद होना, गले और बदन की पेशियो मे खिचाव, शरीर का पीछे की ओर मुडना या भीतर या बगल मे मुडना, आंखे बाहर उभर आना, पुतलियो का फैल जाना, जबडा भीच जाना और श्वास रुक कर मृत्यु होती है। धनुर्वात के लक्षण इससे मिलते है।

उपचार —(१) वमन करावे (२) दूध मे घी मिलाकर पिलावे।

(४) धतूरा खाने से—मुह, गला और आमाशय मे तेज जलन, गला सूखना, प्यास, बोलना रुक जाना, मुख व आखें लाल होना, चमडी खुश्क होना, पुतलियो का फैलना, पेशियो का ढीला होना, धीरे धीरे कुछ भी बकना, कपडो को नोचना और अगुलियो से तार खीचने जैसे चेष्टा करना, अन्त मे बेहोशी होकर मृत्यु हो जाती है।

उपचार — वमन करावें, घृतपान, दुग्धपान करावें। चागेरी के ताजे पत्तो का रस २ तोला ४–५ वार पिलावे।

५-अफीम खाने से—पहले उत्तेजना की दशा होती है। फिर थकान होकर तन्द्रा की अवस्था आती है। इसमे मुंह और होठों पर नोलिमा, आखो की पुतलिया सिकुड जाना-लक्षण होते है। फिर वेहोशी हो जाती है जबडा नीचे लटक जाता है और मुह खुल जाता है। नोलिका बढ़ जाती है। पुतलिया बहुत सिकुड जाती हैं। अन्त मे श्वास रुककर मृत्यु हो जाती है।

उपचार — (१) वमन करावे या आमाशय घुलावे।

(२) सुहागा घी में मिलाकर चटावे।

(३) हीग डालकर पानी पिलाकर वमन करावे। आवे से १ माशा तक हीग खिलाने से अफीम का विष उतर जाता है।

६-जमालगोट का विष खाने से :—पेट मे जलन खून के दस्त, पेट मे एठन और पिन्डलियो मे दर्द होना–ये लक्षण होते है।

उपचार — (१) जौ का पानी और अण्डे की सफेदी मिलाकर पिलावे।

(२) कपूर का जल पिलावे।

७-तम्बाकू खाने से :—जी मिचलाना, उल्टो, वेचेनी, हृदय को धडकन बढ़ना, चक्कर आना और वेहोशी के लक्षण होते है।

उपचार — (१) नमक का पानी पिलाकर वमन करावे।

(२) शक्कर या ग्लुकोज, पानी में घोलकर पिलावे।

८-भांग, गांजा और चरस के सेवन से—पहले तो उत्तेजना आती है व रोगी हसता, गाता चिल्लाता है, फिर आख की पुतलिया फैल जाती है। श्वास रुककर मृत्यु हो जाती है।

उपचार — (१) नमक को पानी में मिलाकर वमन करावे। (२) अमरुद की पत्ती पोसकर उसका पानी बार-बार पिलावें।

(३) खट्टी चीजे, छाछ पिलावें।

★५★ विषैले जीव जन्तु से काट लेना—

[१] सांप काटना.— साप काटने से दंश वाले स्थान पर पीड़ा, सूजन, जी मिचलाना, तन्द्रा, निंद्रा, पेशियो मे जकडाहट, लार बहना और स्वर रुकना, लक्षण होते हे । कुछ सॉपो के विष से धमनियों मे रक्त जम जाता है । श्वास रुककर मृत्यु हो जाती है ।

उपचार :— [१] साप काटने के तुरन्त वाद काटे हुए स्थान के कुछ ऊपर वाले हिस्से मे रस्सी से कसकर वाध देवें, जिससे विष का फैलाव सारे शरीर मे नही होने पावे ।

[२] दंश-स्थान पर पेशाब कर देवे ।

[३] दंश-स्थान पर चीरा देवे और रक्त बहने देवें ।

[४] काटे हुए व्रण पर पोटाश परमेंगनेट का गाढा घोल बनाकर लगावे और उससे धोवे ।

[५] व्रण पर तम्बाकू या हुक्के का गुल लगाना चाहिए ।

[६] फिटकरी, पानी में घोलकर पिलावे ।

[७] सुहागा पानी मे घोलकर पिलावे और उससे घाव धोवे ।

बिच्छू का काटना .— इसमें आग से जलने के समान तेज जलन और पीडा होती है।

उपचार .— (१) जयपाल के वीज को घिसकर दंश स्थान पर लगावे ।

(२) निर्मली के वीज को घिसकर दंश स्थान पर लगावे ।

(३) चूना और नौसादर मिलाकर दंश स्थान पर लगावे ।

(४) दंश स्थान पर थोडा पोटशियम परमेगनेट का चूर्ण रख उस पर नीवू का रस निचौडे, इससे बिष उतारता है।

(५) प्याज पीसकर गाढा लेप दंश स्थान पर करे।

(६) पलाश (ढाक) के वीज पीसकर लेप करे ।

(७) गरमजल मे नमक घोलकर दश स्थान पर म‹

(८) फिटकरी को जल में मिलाकर लेप करे।

(९) नीम के पत्तो का रस पिलावें।

(१०) सिरके मे कपूर मिलाकर लगावे।

(३) पागल कुत्ते का काट

(१) एक वर्ष तक ताँबे के बर्तन में औटाया हुआ

(२) लहसुन अधिक मात्रा मे खावे।

(३) घी और काली मिर्च मिलाकर खावे।

(४) मकोय का क्वाथ या रस पिलावे।

(५) घाव पर प्याज का ताजा रस लगावे। और प्य
रस पिलावे।

(४) बर्रं का काटना — काटे का
पर ठन्डे पानी की धारा छोडे, सिरके मे शहद मिलाकर लगावे सि
मे कपूर मिलाकर लगावे। सोठ, काली मिर्च, सेंधानमक और काल
नमक पान के रस में पीसकर लगावे, स्पिरिट मले।

(५) मधु मक्खी का काटना —

(१) काली बाम्बी की मिट्टी को गोमूत्र मे पीसकर लेप करे।

(२) सिरके मे कपूर मिलाकर लगावे।

(३) दश पर लोहा घिसना चाहिए।

(४) दश पर काली तुलसी की जड पीसकर लगावे।

(५) सिरके मे शहद मिलाकर लगावे।

समाप्त ॥